रत्न १ ला.

# दिव्य यात्रा

जिन्में

जहाज 'तारक' और जहाज 'हिंसक' मारफत की गइ
स्वर्ग नरक और मोक्षकी सफरका वर्णन
करनेमें आया है.

आद्य लेखकः—मी. 'पोरबंदरी'

सुधारा वधारा सह

हिंदी अनुवादकः—वा. मो. शाह.

# दिव्य—यात्रा.

(१)

## गर्भपुरी बंदरमें S. S. 'तारक.'
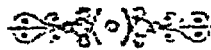
अभी रात्रि और दिनकी बीचका शान्त समय है. आकाश, साधु पुरुषोंके हृदय समान केवल स्वच्छ है. अरुणने सुवर्णकी कुं-जीसें पूर्वदिशाका बडा दरवज्जा खोलकर मोहसें करके मोहवंत हुइ दुनिया को जाहिर किया कि—"जींदगीका आधा हिस्सा तो निंदमेंही गुमाया, अब कार्यमें चित्त लगानेका समय हुवा है." मार्गमें खेलते हुवे विद्यार्थि बालक जैसें दूरहीमें शिक्षकको देखकर भग जावे, तैसें अरुण सारथिने जिन्हके आगमनकी नेकी पोकारी है उन्ह सू-र्यका आगमन जानकर तारे एक पीछे एक अपना मुह छुपाने लगे! पूर्व तर्फके बद्दलोंनें सूर्यदेवके आगमनको आदर देनेके लिये रंगबे-रंगी स्वस्तिक पूर दिये. वसंतऋतुकी बनलीला जब नौरंगी वृक्षोंके साथ क्रिडा करतीथी तब रसीली पुष्पकलियें उन्हालेकी मोसमकी गरमी लेकर प्रातःकालके पवनसंयोगद्वारा विकस्वर होनेमें आतुर बन रहीथी.

पानखर ऋतुमें निराश हो गये हुवे पक्षी उन्हालेके नवपल्लव वृक्षोंके ऊपर आकर किल किल—मधुर स्वरका उच्चार करते थे, और

फूलवारियोंके सुंदर फल देखकर आनंदित वनते थे. एक तर्फ रसी-ली कोकिला पंचम स्वरका आलाप करती थी, और दूसरी तर्फ सारस, मयूर, चकोर, और तोते–मैनां आदि मनहर कंठसें रसिक गान करते थे. अव तो भक्तजन भी प्रभाति पद 'साधुवंदन' आदि ललकारने लगे. शहरमें वीचके मंदिरोंमें घंटनाद शुरु हुवा. उपाश्रयमें साधुजी महाराज अपनी अपनी प्रज्ञा मुजव संघ समक्ष परमात्माजीकी वानी सुनाने लगे और 'धन्य वानी मुनि-राज!' के मधुर घोषसें उस वानीकों वधा लेनेमें आती थी. वो वानी श्रवण करनेको आनेवाला वर्ग वहुत करके वृद्धावस्थाकों प्राप्त हुवा पुराना था; युवकोंकों वहां जानेमें अरुचि होतीथी; सववाकि जिन्होंको यदवा तदवा वोलनेमेंही आनंद होताथा उन्होंकों 'मुंहपति' अ-गर वाचाको कावूमें रखनेवाले साधन क्यों पसंद पड सकै?! फिर कोट वेस्टकोटके विगर वेठना उस्कों ने कदाचित् प्राप्त की हुइ विदे-शाय केलवनीकों हीनपद लगानेवाला मानते होवें, वैसा भी वो-लना कानपर आताथा! समीपके विभागमें छोटी उम्मरके वालक नौकारमंत्र और सामायिक शीखते थे और 'माटी–मकोडा' ऐसा अशुद्धोच्चार कहते हुवे हंसतेथे. एक सज्जनकी मिसाल कैसे वोलना या किस तरह कपडे पहने चाहिये इतना भी जिसकों ज्ञान नही वैसा तीन रुपैके दरमाये वाला शिक्षक अभी संघपतिके घरके लिये शाक-भाजी लेनेकों गया है! और विद्यार्थि पेडे, रुमाल और पता-सेके इनाम फिर कव मिलेंगे उस सम्वन्धी वातोंमें मजाह उडा रहे हैं. 'जैन ट्रेनींग कॉलेज' के अभावसें ये विचारे वालक जींदगीका उत्तमोत्तम हिस्सा व्यर्थ गुमाते हैं यह देखकर दयाके अश्रुपात कर-नेके वास्ते अभी वहांपर कोइ संत पुरुष हाजर न था.

जैनोंका एक वर्ग अभी द्रव्यपूजामें लग गया है. "सामायिक तो निर्धन होवें सोही करें" किंवा "सम्पूर्ण शुद्धताके विगर भाव-

क्रिया न करनी वोही उत्तम है" ऐसा कह कर द्रव्यपूजामें मशगुल हुवे सैंकडों स्त्रीपुरुष रंगबेरंगी वस्त्र परिधान कर अपटीप लावन्यैत हो प्रभुजीको अपने स्वआत्मके दर्शन करानेके लिये झुकते डोलते चले जाते हैं।

ऐसे आनंदमय समयमें मदसें उन्मत्त हुवे समुद्रकी अंदर बाप्पनहाज-स्टीमर 'तारक' ( S. S. TARAK ) खडी है. सैंकडों लोग दूर स्थित हुइ वो स्टीमरमें यात्रा-प्रवास करनेके वास्ते छोटे बडे मछवा-होडीमें बैठकर स्टीमर तर्फ जाते हैं. एक स्टीम लोंच (Steam Launch) मेंसें बहार निकलकर एक तरुण स्टीमर 'तारक'-कीसीडी पकडता है और उनकी पीछे दूसरे ८-१० मनुष्य उनको देखतेही खडे रहे हैं.

" भाइ आत्मचंद्र ! खबरदार रहना. शरीरकी यत्ना करना और मूलरुप मुसाफरी-सफर कर जल्दी जल्दी गृह तर्फ पधारना." एक वयोवृद्ध स्त्री, कि जो ये ममतावंत शब्दोंके उपरसें इस वार्त्ताके नायक आत्मचंद्र मुसाफरकी जनेता मालुम होती थी, वो बोली.

" बहुत अच्छा. मातुश्री ! तुमारी कृपासें में मूलरुप मुसाफरी कर सकुंगा; लेकिन कदाचित् मुजको पीछे आनेमें विलंब हो जाय तो फिकर नहीं करनी; सबब कि दरीआइ मुसाफरी हमेशां परतंत्र है वो आप क्या नहीं जानते हो ? मेरे पिताश्रीजीने बहुत पैसे खर्च करके यह स्टीमरके अंतके अंतिम बंदरकी टीकीट ले दी है. वहां पहुंचनेके पेस्तर में मार्गमें आते हुवे बंदरोंको देखता हुवा सफर करुंगा उस्से; तथा किसी समय तोफान लग जावे उस्से मकानपर पहुंचनेमें शायद देर लग जाय; यदि मैंने मनोनिग्रह-ज्ञान इत्यादि ऐसे साधन पास रक्खे है कि जिस्से कभी स्टीमर टूट जाय तो भी में सही सलामत रह सकुंगा."

आत्मचंद्रने दोनु हाथ जोडकर नमस्कारपूर्वक कहा और पीछे स्टीमरकी सीढी के सोपान चढ गया. उनकों प्रवासशिक्षा आशीष आदि देकर उनके कुटुंबिजन स्टीम लांचमें बैठकर पीछे चले. और अब सेंकडों यात्रावासीयों के बीच आत्मचंद्र अपनेकों अकेले जैसा मानने लगा. कुटुंबवियोगसें उन्का मुख किंचित् म्लान हुवा. वो निःश्वास डालता न था; मगर उनके हृदयमें हजारों निःश्वास समा रहे होवें वैसी उन्की मुखमुद्रा मालुम होतीथी—कहतीथी.

मुकरीर करा हुवा टाइम—समय होनेसें स्टीमर 'तारक' ने बंदरकों छोडकर आपकी गतिकों आगे चलाइ और विकट 'संसार सागर' में अपना मार्ग ग्रहण किया.

---

## ( २ )

## 'तारक' के मुसाफरोंमें तोफान !

---

आत्मचंद्र वियोग दुःखकों भूल जानेके लिये केबीनमेंसें व्हार आकर केप्टनकी केबीन कि जो उनकी केबीनके बाजुमेंही थी उसमें गया. वो केप्टन कि जिसका नाम विवेकचंद्र था, बडा बाहोश और आत्मचंद्रके स्वभावके साथ तद्दन समान होनेसें, घंटे भरके अरसेमें वे दोनूके बीच स्नेह शुरु हो गया. दोनू एक ही विचारके होनेसें केबीनमें बैठे बैठे ही जीव—अजीव—पुन्य—पाप—आश्रव—संवर निर्जरा—बंध और मोक्ष आदि फीलसुफी—तत्त्व सम्बन्धी वार्त्ता विनोद करते थे. दरम्यान स्टीमरके दूर विभागमेंसें कुछ जोर तौरपर शोर बकोर होता सुननेमें आया; इन दोनू महाशयोंने उस तर्फ निगाह करके—कान लगा कर सुना तो आवाजने गंभीररूप ग्रहण

किया मालुम हुवा और स्हामनेसें एक खलासी दौडता हुवा आ-कर कहने लगा कि–' साहब ! मुसाफर लोग सामान्य बातचीतों परसें तोफान मचाने पर आ गये हैं; वास्ते जल्द बंदोबस्त होनेकी जरुरत है. ' ऐसा सुनतेही तुरंत केप्टन और आत्मचंद जहां शोर-गुल मच रहाथा वहां गये, और लोगोंकों शान्त करनेके लिये यत्न शुरु किया. लेकिन बात बहुत रंगपर आ गइथी; जिस्सें लोगोंने अपना अपना समतूलनपना गुमा दियाथा और क्लेषका काला बद्दल बहुत छा गयाथा. इस बद्दलका जमाव कुछ ज्यादे वख्त र-हता तो शायद खेदकारक बनाव बन जाता; मगर सद्भाग्यसें केप्टन ऐसा वख्त आनेके पेस्तर ही आ पहुंचा और आपकों मिली हुइ सत्तासें और वाहोशीसें लोगोंकों बिल्कुल शांत करके तोफान मचनेका सबब पुछा. शान्त हुइ टुकडीमेंसें एक मनुष्य बोला कि–" साहब सरदार ! फुरसदका वख्त गुजारनेके वास्ते हम सब यहांपर जमा हुवे और सामान्य धर्म चर्चा करने लगे; परंतु इस समूहमें अलग अलग धर्मावलंबी होनेसें उन्होंने अपना धर्म सच्चा है वो समझाने लिये कोशीश की. यदि इतनाही करनेमें आया होता तो क्लेषका कारन नही होता; लेकिन उन्होंने तो आगे बढ-कर अपनाही कक्का सच्चा ठहरानेके वास्ते दूसरे धर्मवालोंकों निंदना शुरु किया और उस सबबसें यह कमनशीब बनाव बन गया. "

केप्टननें सभीकों उद्देशीकर कहा:–" अय भाइयो ! धार्मिक चर्चा इस मुजब करनी छोडकर मध्यमपनेसें और थोडे समय के पेस्तर अमेरीकामें चिकागोकी ' धर्मकी पार्लामेन्ट ' में हुइथी वैसी शांत रीतिसें होनी चाहीतीथी; लेकिन अब तो हुवा सो हुवा. इस वास्ते सोच करना सो भी फजूल है. सुभाग्यसें तुमकों धर्म तर्फ आंतरिकवृत्ति पैदा है, तो भविष्यमें तुम तुमारे देह के साथ देशका भी उद्धार कर सकोगे. तुम इधर इकट्ठे हुवे हो उनमेंसें बहूतसे जन

धर्मकी दरकारवाले मालुम होते हो, तो तुमारी समक्ष आत्मिक धर्मका एक व्याख्यान–भाषण होना जरुरका है, ऐसा मैं मानता हूं, कि जिससें श्रवण करनेसें यहां के क्लेषका कारन 'धर्मान्धता' खुद वखुद अदृश्य हो जायगी."

श्रोताओंको यह कथन वहूत ही प्रिय मालुम हूवा और व्याख्यान के लिये उन्होंने संपूर्ण इच्छा जाहेर की.

केप्टनने और आत्मचंद्रने परस्पर मसलत कर ली और उस वाद केप्टनने जाहिर किया कि–"कल रोज दुपहरके एक वजे इस स्टीमरकी आरामकी जगह कि जहां विशाल खुल्ला भाग–हिस्सा है, वहां हरएक जिज्ञासुओंको आना. वहां श्रीयुत् आत्मचंद्रजी आत्मिक धर्मपर व्याख्यान देवेंगे." हर्षनाद के वीच उन समूहनें यह वात उठा ली और वे सभी उठ खडे हो अपनी अपनी जगहपर जा पहूंचे.

स्टीमरनें अव किनार छोडकर विशाल दरियावमैं प्रवेश किया था उससे त्वरित गति धारण की थी. आस्ते आस्ते सूर्य भी छुप जाने संवंधी रम्मत खेलतेमें ही अद्रश्य हो गया, उसीसे सव जगह अंधेरा फैल गया.

---

## ( ३ )

## श्रीयुत् आत्मचंद्रका व्याख्यान.
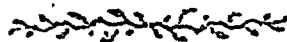
रफते रफते रात खलास हो गइ. प्रभातका वख्त हुवा. मुसाफिर जागृत हुवे, और सव आप आपके नित्य कर्म कर खा पीके तैयार हुवे. जव एक वजेका अंदाज हुवा कि वे सभी तुरंत हर्षसह व्याख्यानके लिये मुकरीर की गइ वैठक पर जाकर जमा हो गये और एक वजेके करीव विवेकचंद्रके साथ आत्मचंद्र आ पहुंचे और

नियत की गइ बैठक पर बैठ गये. एक बजा कि तुरंत आत्मचंद्रने उंचे मंचक पर खडे होकर व्याख्यान देना शुरु किया.

महेरवान केप्टन साहब और विविध धर्मावलंबी बन्धुओ! तुम विविध धर्म पंथियोंके बीच गत दिन धर्मकी सामान्य चर्चा मै जो चकमककी झडाझडी हुइथी वो देखकर मुझे बडी दिलगीरी हुइथी. धर्म ये अैसा परम शांत शब्द है कि, उनके पैदे तक भी क्रोध या द्वेषका नाम मात्र नही है. हर एक संप्रदायने 'धर्म तर्फ पूर्ण ममता' जरुर रखनी ही चाहियें, मगर 'धर्मांधता' को बिलकुल तिलांजली दी होवे विसीकों ही मैं धर्मी कह सकुंगा. मै किसीके पर अंगत टीका—जात्याक्षेप करना नही चाहता हुं; लेकिन कल जो बद्दल उमड कह छा रहाथा उसका सबब धर्मके नाममें विक्रिय होत हुवा अज्ञान था. वो खोटे रस्तेसें प्रभुकों मिलनेका यदि इरादा रखते होगे तो लंबे समयमें भी सत्य शोधन होना अशक्य है. मै मेरी बुद्धिके अनुसार जुदे जुदे धर्मोंके रहस्यकी तपास कि है, हर एक धर्ममें चंचुपात किया है, और वै सभीका अवलोकन करनेसें जो उच्च स्थिति पाये हुवे धर्म है वै हरएक मै आत्मिक धर्म कम या ज्यादे हिस्से रहा हुवा है, मगर पूर्ण तालास करनेसे जैन दर्शनके भीतर आत्मज्ञान संपूर्ण प्रकारसें प्रकाशनेमै आया मालुम होता है. जैन फीलसुफी—तत्त्वज्ञान—अध्यात्म ज्ञान अैसी पूर्णताकी हद पर रखनेमै आया है कि उनका संग होते ही जैसें विजुलीके घर्षणसें उनकों लागु हो रहे हुवे यंत्र चलने लगते हैं और उनके बलसे तुरंत चिंतवन कीये हुवे स्थल पह पहुंचा देते है, तैसे जैनतत्त्व भी किसी भी जगा पर रोकटोक हुवे विगरही सीधा मोक्ष नगर अखंडानंद भुक्तनेके वास्ते ले जाता है. मेरा अनुभव आग्रह पूर्वक जो बात मानता है में वही बात सिद्ध कर बतलाउंगा.

प्यारें बान्धवो ! यह आत्मिक धर्म दर्शाने वाला विषय होनेसें यह मोहरुप आवरणसें छा गया हुवा संसारमैं ऐहिक पराक्रम के संबंध मै कुछ बोलनेकी जरुर नहीं है, फक्त मोहकी दृष्टिगम्य अव-दशा के परदे पीछे परोक्ष रही हुइ सुक्ष्म जीवन संपत्तिओंके वृक्षोंका सफल होनाही बतलानेका यह उपक्रम किया गया है. स्थूल दृष्टिसें देखनेवाले वृक्षकी स्थूल संपत्तिसें खींचाकर मूलके पास जाकर वृक्ष पर चडकर उनके पुष्प फल तोडते है; और भाव दृष्टिसें देखनेवाले चित्त स्वगृहादिक एकांत स्थलमैं पुष्पका सुवास प्राप्त करकें वो सुवासका मूलभूत समीपस्थ मगर अदृष्ट पुष्पकों ढुंढते है. और उ-सलेंही भावदृष्टियोंकी दृष्टिके पास भावजीवनसृष्टि खडी करनेका प्रयत्न इस विषयमें किया है.

ज्ञान ये एक सर्वोत्तम वस्तु है, और उस बिगर सद्गतिके मार्गपर कोइ भी नहीं चढ सकते हैं. उनमैं भी साहित्यका उच्च उपयोग, जीवनकी उत्कृष्ट भावनाका और उदात्त रसका संस्कार होवै तो बुद्धिवल्लीकों चडनें और टिकनेके लिये शास्त्ररुप महान् वृक्षकी जरुरत है. बुद्धिकों शुद्ध परम व्यायाम जैसा तर्कशास्त्र देता है वैसा अन्य वस्तु क्वचित्‌ही देती होगी. और तर्कशास्त्र व्यवहार-निश्चयमैं सत्यासत्यकी परीक्षा करनेका भी शीखलाता है और वस्तु-ओंके लाघवगौरवकी तुलना करनेका अभ्यास भी कराता है. जिस बुद्धिके व्यायाम वास्ते शम शास्त्रकी जरुरत है उस बुद्धिकें सनातन अन्नरुपसें अपने देशमै आत्मिक विषयके शास्त्र गिनाते हुवे आये हैं. वही गणना बहुत योग्य है. वो शास्त्रसें हृदयकों ऐसा बख्तर मिलता है कि संसारके घाव उनकों लगनेही नहीं पाते हैं. और इसी तरह ऐहिक लाभ और अन्य प्रकारसें लोकांतर लाभ अपनकों देनेके वास्ते श्रीवीर प्रभुजीने आपकी आर्यप्रजाकों यह शास्त्ररुप अध्यक्ष दाय भाग—वारिसनामें में कायम किया है.

उपर कहे हुवे मुजब तर्कशास्त्र और आत्मिकशास्त्र ज्यौं जरुरतवाले हैं त्यौं न्यायशास्त्राभ्यास भी जरुरत वाला है. न्यायशास्त्रके संस्कारसें ईश्वर शोधनमैं सूक्ष्म प्रकारसें शक्ति–गति बढती है; वास्ते वैसे मोक्ष गमनमैं मदद करने वाले शास्त्राभ्यासकी जरुरत है.

आर्य प्रजाकों संस्कृत और मागधी भाषा ज्ञान कल्याणके लिये जरुरतका है. यह भाषाके ज्ञानबीजका विकास होनेसें अनेक शाखाओंके उपर बहुतसे पत्र फल फूलके बोजेसें नीचा नम गया हुवा वृक्ष खडा होता है; वास्ते अैसे सिद्धांत शीखनेके लिये मात्र शब्दके इंद्रजालकी तरह नहीं–मगर जीवमान प्राणरुपसें स्फूरती रखनी चाहियें. इतनाही समझानेके लिये इतना प्रयत्न किया है.

यह संसारमै सामान्य रीतिसें सभी अपने गुण देखते है, लेकिन कोइ स्वदोष नहीं देखता है. कविकुलभूखण कालीदासजीने भी कहा है कि 'सर्वःकान्तमात्मीयं' स्वदोष ढुंढनेकी इच्छा और शक्ति थोडे ही मनुष्योमें होती है और जहां होती है वहां उच्च बुद्धिका और निष्पक्षपात स्वात्विक वृत्तिका परिणाम होता है.

अपनी बाह्य समृद्धिकी तंगी सभी समझ सकते हैं. और बुद्धिमान जन विशेष बुद्धिवाले के आगे अपनी बुद्धि हार जाती हुइ समझ लेते हैं; मगर अपने हृदयमें विकारका उदय होवे उस वख्त उस विकारका उदय और वो मोहावरणकी ताज्यता समझनेवाले प्राज्ञजन विरल होते हैं. और उसमें भी ये दोषकों दृष्टिद्वारा नाश करनेकी सफलकला तो मनोजयका स्पष्ट चिन्ह है. मनोजयके बारेमें शास्त्र कहता है कि जिस हवा के योगसें बदल विखर जाता है, उसी हवा के योगसें बदल उमंड आकर बरसता है, उसी तरहसें मनद्वारा ज्ञान विखर जाता है और मन के ही द्वारा ज्ञान सुस्थिर हो फल भी देता है; लेकिन कुछ अवस्था की ही तफावत है.

अह असार संसारके अंतमै, साररुप परमसत्य प्राप्त करने के अधिकारके निर्भय मार्गपर जाने के वास्ते अब कुछ नजर करेंगे. यह संसारकी पर्याप्ति "दुःख, चित्त, और जीवन" ये तीनसें करकें है. दुःख के वख्त शोचना के सुख दुःख कर्मने बनाये है; वास्ते जैसे कटुक और मीठी औषधी अपनी मा पीलाती है, वैसे कर्म भी कटु मीष्ट दुःख सुखका अनुभव कराता है; जैसें दुःख मिटाने के वास्ते वैद्य रोगी पर दया लाकर डाम–दंभ देता है वैसे ही दैव दया लाकर कर्म मुक्ति के वास्ते दुःख देता है. फिर भी महात्माओंने कहा है कि, अपनकों जब दुःख आ कर पडै तब अपनसें भी जिसकों ज्यादे दुःख होवै उसीकी तर्फ नजर करनी फायदेमंद है. दुःख मिटाने के वास्ते वहारसें ऐसा औषध है तो वैसा अंतरका विष समूलसें नष्ट करने के वास्ते शास्त्र वचन याद करना कि–'मनः एव मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षयोः'–मनुष्यों के बंध और मोक्षका कारण मन ही हैं. कर्मोदयसें प्राप्त हुवा दुःखमय भाग्य भी निभा लेनेका है. उनकों निभाते निभाते दैव पर असंतोप लाए करतें 'मेरे किये हुवे कर्मोंकी कमाइ भुक्तने विगर छूटका ही नहीं' ऐसा शोचकर संतोषसें उस दुःखकों अमृतकी तरह पी जाना. समय आर्त्त रौद्र ध्यानमें नहीं, लेकिन धर्म और शुक्ल ध्यानमै व्यतीत करना. दुःखका इसी तरह निवारण करना. एक विद्वानने कहा है कि–' संसार के दुःख सच्चे नहीं है; मगर मनकी निर्बलतासें सच्चे और सबलतासें झूठे मालुम होते हैं. ' मनकी हारें हार है, मनकी जीतें जीत; वेग परम पद पाइयें, मन ही की परतीत.' वास्ते मन दृढ कर कार्य सिद्ध करलेना चाहियें.

जीवन अल्प है ये वात हरएककों ध्यानमै रखनेकी है. और भवनाटकका खेल भी ध्यानमेसें दूर न होने दिजीयें, और उसीसें

विपत्तिद्वारा मोह और घभडाना छोडकर बंध हुवे मोहावरण के द्वार खुले कर मैदानमें पड सिंहकी तरह मोह—शोकरुप शत्रुकों पंझेसें चीरकर जेर करना चाहियें. लेकिन सिंह, जैसें स्थूलोदर पोषण निमित्त यत्न करता है वैसे नही; मगर मर्दकी तरह टेक और दूसरों के पर दयाकी लगनी रखने की जरूरत है.

संसार जिसकों दुःख गिनता है उनकों अपन अपना कल्याणकारी गिनं लेना, और संसार जिसकों सुख गिनता है उनकी अपने उपेक्षा करनी चाहिये. सामान्य रीतिसें देखते है तो सामान्य मनुष्य जड बनकर सुख दुःख इन दोनुंके जोरसें दबजाते है. और जड मनुष्य ही दिन परदिन ज्यादे पापी, क्रूर और खेद कारक दशाकों प्राप्त होते है. चित्त जैसे महात्मा ब्रह्मदत्तकों उपदेश देता है कि, जो पुद्गलिक संपत्तिये हैं वो यदि चित्तको प्रिय हो पडेगी तो उनके आरंभ और परिग्रह बढ जायेंगे. मै तो उन्हीकों वडीभारी आपत्तियें जैसी मानता हुं, जहां लक्ष्मी होवें वहां विपत्तियेंके द्वार खुल जानेसें वे घुस जाती है. संपत्ति रुपचंदनवृक्ष पर विकाररुप वहुतसे सांप हमेशां लिपटे ही रहते है. संपत्ति विपत्तिकों समान माननेवाले जो अल्प संसारी—भव्यजीव होते है सो अपने पराक्रमसे करके चित्तकों महान् अभ्युदयके मुख्य मार्गपर चढा देते है और उनके श्रेयका वडा उदय आरंभते है. जब अन्य जीवोंमें सत्यका आभास पडता है; तो भी वासनाकी लोलुपतामेंसें मुक्त नही रह सकते हैं, तब यह ' मोक्षके मोती ' मात्र ' निर्जराकों ही ढुंढते है. और उच्चस्थिति पर पहोंचनेसें पाप या पुन्यकी तर्फ नजर भी नहीं करते हैं; क्यों कि वो रस्ते बंधके हेतुरुप हैं. उपर बतलाये गये अन्य जीव कि जिन्होंका धर्म उधार है—नगद नहीं वे विषयोंकों विभत्स, देहकों क्षणिक, आयुष्यकों वेगगतिवंत, बंधुओंके समाग-

मकों मिले हुवे प्रवासियोंका क्षणिक समागम, संसारकों असार और निरस होनेसें त्यागना अैसे अैसे अनेक वचन कहते हैं, वै कथन मात्र ही होते है, क्रियामै नहीं होते है. कथन मुजब क्रिया के करनेवाले तो कोइ नर पुण्यात्मा होते है; क्यौं कि उन पुण्यात्माओंके दिलमे इसी तरह संसारत्याग रमन करता हुवा ही मालुम होता है.

इस तरह महाभ्युदय प्राप्त हुवे चित्तकों जो उपशम भाव प्राप्त होता है उतनेसेंही वो उदय भावकी समाप्ति नही होती. जेसे प्रथम फूलका उदय हुवे बाद फलका उदय होता है तैसें, अैसे उपशम भावके अंतमें वो शांत हृदयमें क्षयोपशम भाव आपही आपसें होता है. अैसे उत्तम भावमें चढे हुवे पूरुषकों 'साधु' कहे जाते हैं, कि जिन्होंके हृदयमें सभी भूतोंके उपर करुणा, सत्य, ब्रह्मचर्य और परिग्रह रमन कर रहता हैं, जिन्होंका चारित्र विशुद्ध है, जिन्होंने सम्यक्त्व रुप कुंजीसें धर्मका दरवज्जा खोल दिया है और विद्वान होनेपर भी अैसा मानते है कि हम अज्ञ हैं. जिस ज्ञानसें करके अज्ञता दुर होवै वैसे ज्ञान साधनसें हमारा अज्ञान दुर होगा, अैसा श्रद्धापट जिनके हृदयमे स्थित है और ज्ञान सहित क्रिया करने वाले हैं, अैसे विद्वान–क्रियावंतके वो हृदयमै जो बुद्धिगोचर है अैसा तत्त्व खूदबखुद रहजाता है. पानीके वंबेकी अंदरसें हवा वगैरः हरकतोंकों वंबा चलानेवाले मनुष्य निकाल देते है उसीकी साथ वही वंबेके नलमें पानी फोरन चढता है, तैसें वंबे समान हृदयमेंसें विकार वगैरः हरकतें दूर होजानेसें हृदयमें तत्त्व आपही आपसें प्रकट होने लगता है. धर्मोदय रुप पूष्पके उदयकी तरह अैसा फलका उदय होने लगता है. इस जन्ममें अैसा फलोदय हुवा होवे तो मरण तक बंध नहीं होता है, मगर गतिका मोक्ष करता

है, और कभी मोक्ष नहीं हो सके तो सद्गति–उच्च स्थिति अवश्य पाता है. ऐसे उत्तम आर्योंकी उत्तम श्रद्धा अति प्राचीन समयसें चीरंजीव रही हुइ है. वो उपशम भावके फल रुप क्षयोपशम भाव जिस हृदयमे इस तरह प्रकट होते हैं, उस हृदयमें जीवनकी सफलता, इश्वरका स्वरुप और निवृत्तिवल नये रुपसेंही प्रकट होते है.

इस मुजव आत्मबोध पानेसें यह जीवन्मुक्तका शुद्ध चित्त शुद्ध ही रहा करता है और कषायादि विकारोंसें अशुद्ध होनेही नहीं पाता. अपनी आपत्तिके वख्त रखने लायक धीरज, दिव्य संप्रत्ति के वख्त रखने लायक मैत्री भावना, सबहीके सुखसें सुखी और दुःखसें दुःखी होने जैसी कोमलता, स्वपर संपत्ति विपत्तिकी अंदर सबके रसमय मित्र होनेकी शक्ति, और रागद्वेषसें विमुक्त होनेकी इच्छा– ये सब गुण–क्रियाओंमें यह जीवनमुक्तके जीवनकी आरोग्यता ओर जीवनकी शुद्धि है. उसका इश्वर साक्षात्कार है, आनंद और समाधि है. जो जीव क्षयोपशम या क्षायिक भाव पाता है उस जीवकी सफलता इस तरह होती है. ऐसे सफल जीवमें और यथाशक्ति ईश्वर साक्षात्कारमें प्रकट हुवा मुक्त भाव कितनी वख्त कायम रह सकता है सो देखनेका है. अध्यात्म दर्शनसेंही प्रकृतिका वल कम हो जाता है, और उस पीछे शांत आनंद नवीन शक्तिरुपसें उभडता है. शरीर सुख दुःखका अनुभव करे, शरीरके परमाणु और प्रजाओं मै फेरफार होती है; तो भी यह आनंद सदोदित–सम स्वरुप रहता है. महात्मा श्री गजसुकुमालजीको, तथा मेतारजजीको, और परमात्मा श्री आदि देवजी तथा श्री वीर प्रभुको असह्य परिसह और उपसर्ग आये थे; मगर उन्हीं की तर्फ उन्होंने विल्कुल नजर भी नहीं की थी; क्यों कि उन्होंका लक्ष तद्दन शांत आनंद मे निमग्न था. अर्वाचीन समयमें भी श्री जुठा तपस्वीजी नामके एक महापुरुष हो

गये हैं, उन्होंने जबरदस्त परिसह अडग मनसें सहन कीये थे. फिर भी देखिये—सिनेका जैसे तत्त्वज्ञानीकी नसें रोमके क्रूर महाराज नीरोकी आज्ञा होते ही काटडालनेमें आइथी, और उन नसोंकी अंदरसे खून वह रहा था उस वख्त कठीन वेदनासे उनका शरीर तडफडता था; तो भी उनको दरकार न रखतें अपने स्नेहीजनोंकों उनमहात्माने तत्त्वोपदेश दीयाथा और वही काम करतें देहांत हुवा था. उक्त महात्मा सभी अदृश्य हो गये हैं; तदपि उन्हीके महोदय वलसें उन्हीकों और उन्हीके जैसे श्रद्धावंत—क्रियावंत और ज्ञानवंत तपस्वीओं गुप्त रत्नोकी तरह जहांपर प्रकाशित होवै वहां खडी हुइ ये तपोमय ज्योतिकों अपना हृदय मान्यकी नजरसें देखता है.

एक आत्मार्थी विद्वानने कहा है कि—अर्थकों तुं हमेशां अनर्थ रुप ही गिन; सवव कि उसमें सुखका लेश भी नहीं है; और ये वात भी सच्ची है! जिसके पास धन है उनकों अपने पुत्र की भी भीती रहती है. और ये संसारमें उत्पन्न हुवा कोइ भी अंत तक कुशल होवै अैसा भी मालुम नहीं होता है और वहुत वहुत पुण्य करकें जो द्रव्य वगैरः सुख प्राप्त करते है उनका परिणाम देखने है, तो विचार होता है तव मुझे डर लगता है: सवव कि वडे पुण्य के समूहसें करकें अपन अनेक विषय और द्रव्यादि सांसारिक सुख स्वीकारते है. और वै विषय वढकर ऐसे महान् ढेर हो जाते है कि वें विषय कें भुक्तनेवाले विषयीकों सुखकी जगह व्यसन हो पडता है; वास्ते कामनामय पुण्य भी वंध रुप है. अपने लोग धर्म करते है उसमेंसें कोइ मुमुक्षु ही निर्जरामय धर्म करते है, वाकीका वडा भाग तो उनमेंसें कुछ पुण्य होवै या धन मिलें या सांसारिक सुख मिलें ऐसी कामनासें धर्माचारण करते हैं. कामना रखनी ये भी एक जातका लोभ है.

और कामनासें करके किया गया धर्म 'सकाम' कहा जाता है. और कामना विगर केवल मोक्ष प्राप्ति के वास्ते धारन किया गया धर्म वो 'निष्काम' धर्म कहा जाता है. सकाम धर्म और सकाम पुण्यका फल दुःखदायक है, और सकाम धर्म आचरनेवाले के हाथमेंसें मिला हुवा क्षणिक सुख पीछा चला जाता है. और निष्काम-निर्जरा धर्म आचरनेवालेका कल्याण शाश्वता-हर हमेशां कायम रहता है.

मुमुक्षुजन. देह मंदिरमें रहा हुवा पूर्ण शुद्ध श्री आत्मदेवकों प्रत्यक्ष करके उनकों परमात्मा के साथ एक तार लगाकर आप शुद्ध रुप बनकर ज्ञानादि अनेक गुण जैसे प्रभुजी में हैं वैसे आपमें भी जान-लेकर अनुभव करके प्रकट करनेका प्रयत्न करते हैं.

बान्धवो ! दुःखकी किस वास्ते दरकार रखते हो ? दुःखी अनाथतामें मनुष्यकों बचानेवाले उन्ही-खुद के संस्कार है, उन्ह के इश्वरपरका विश्वास है वो विश्वास, वो संस्कार, वो दर्शन ये त्रीपूटी मिलकर एक वस्तु होवें उसीका नाम आत्मज्ञान है.

प्रेय शोधक और श्रेय शोधक ऐसी दो जातीकी जीवन इच्छा है. और लौकिक असद्भाव तथा धर्म बोधित सद्भाव ऐसे दो प्रकारके भाव हैं.

धर्म परायणता, तप, और योग यह अध्यात्म जीवनकी मूल वस्तुअें हैं.

दुःखोदयसें अस्त बनकर अकर्त्तव्य कर बैठ न रहतें सद्कर्त्तव्य क्रियेही करना यह आर्यप्रजाका लक्षन है. यह आर्यता जिनमें मालुम होवें उनके भावि विषयमें आर्यजन 'अमर आशा' रखते हैं. साक्षर श्री मणिलालजीने कहा है कि:-'कहां भी लख्खों निराशामें अमर आशा छुप रही है.' तो उक्त आशासें

यह लोकमें यह आर्य शरीर पडेगा तो दिव्य लोक उस वास्ते सिद्ध होयगा, ऐसी आशा अमर ही है. तब सामान्य लोगसंघ प्रारब्ध भोगके पास मे फँस जाकर, भाग्यको सब बात सुपरद कर अस्त होता है, मरनको चाहता है, पापाचारसें ऐहिक लाभ ढुंढते है, और सिंहकी गर्जना सुननेसें गडओंकी तरह भगजाना और कोरा करना इन दोनु मेसें एक भी नही कर सकतें हैं. वैसे गभराट और भयमें डूबकर कंपायमान जीवन गुजारते हैं. यह सबका कारण ' तामसी वृत्ति ' है. उसको हठाकर उसके बदलमें ' सात्विक वृत्ति ' जमा देनेके वास्ते हरएक मनुष्यको प्रयत्नवंत होनेकी अव्वल दर्जेकी जरूरत है.

और दुःख मात्रको भूल जाकर वो दुःख तिमिरके वीच सदोदित रहने के लिये और इस धर्मके कारणरुप अंतर्ज्योतिको हृदय मंदिरमें प्रतिष्ठित करनेके लिये, अगर तो शोककी जगह आत्मिक सुख खडा करनेके लिये प्रयत्न करना चाहिये.

शक्ति, स्थिति और अधिकार मुजब सब मनुष्योंके साथ शिरपर धर्म बंधन प्राप्त होता है; मगर किसीके धर्मबंधन उनकी स्थूल वृत्तियोंके बलसें परोक्ष रहता है और किसीकी स्थूल वृत्तियें उनके धर्म बंधनके ताबे रहती है. जिनके धर्म बंधन परोक्ष होते हैं उनको विषय बंधन प्राप्त होता है, और जिनके विषय बंधन छूट जाते हैं उनको धर्म बंधन प्राप्त होता है. उभय-दोनु बंधनोंसें पराधिनता प्राप्त होती है; लेकिन विषय बंधनसें दुःखका परिणाम आता है, और धर्म बंधनसें केवल स्वस्थताही प्राप्त होती है, और सुख तथा दुःख इन दोनु पदार्थोंका बल अस्त होजाता है. इतनाही नही, लेकिन विषय बंधन जब उनके बंधिवानके हृदयमें दीनता और अनीशता भरता है, तब धर्मके बंधनसें बंधे हुवे हृदय दीनतासें मुक्त

गये हैं, उन्होंने जबरदस्त परिसह अडग मनसें सहन कीये थे. फिर भी देखिये—सिनेका जैसे तत्त्वज्ञानीकी नसें रोमके क्रूर महाराज नीरोकी आज्ञा होते ही काटडालनेमें आइथी, और उन नसोंकी अंदरसे खून वह रहा था उस वख्त कटीन वेदनासे उनका शरीर तडफडता था; तो भी उनकी दरकार न रखतें अपने स्नेहीजनोंकों उनमहात्माने तत्त्वोपदेश दीयाथा और वही काम करतें देहांत हुवा था. उक्त महात्मा सभी अदृश्य हो गये है; तदपि उन्हीके महोदय वलसें उन्हीकों और उन्हीके जैसे श्रद्धावंत—क्रियावंत और ज्ञानवंत तपस्वीओं गुप्त रत्नोकी तरह जहांपर प्रकाशित होवै वहां खडी हुइ ये तपोमय ज्योतिकों अपना हृदय मान्यकी नजरसें देखता है.

एक आत्मार्थी विद्वानने कहा है कि—अर्थकों तुं हमेशां अनर्थ रुप ही गिन; सबब कि उसमें सुखका लेश भी नहीं है; और ये बात भी सच्ची है! जिसके पास धन है उनकों अपने पुत्र की भी भीती रहती है. और ये संसारमें उत्पन्न हुवा कोइ भी अंत तक कुशल होवै असा भी मालुम नहीं होता है और बहुत बहुत पुण्य करकें जो द्रव्य वगैरः सुख प्राप्त करते है उनका परिणाम देखने है, तो विचार होता है तब मुझे डर लगता है; सबब कि बडे पुण्य के समूहसें करकें अपन अनेक विषय और द्रव्यादि सांसारिक सुख स्वीकारते है. और वै विषय बढकर ऐसे महान् ढेर हो जाते है कि वे विषय के भुक्तनेवाले विषयीकों सुखकी जगह व्यसन हो पडता है; वास्ते कामनामय पुण्य भी बंध रुप है. अपने लोग धर्म करते है उसमेंसें कोइ मुमुक्षु ही निर्जरामय धर्म करते है, बाकीका बडा भाग तो उनमेंसें कुछ पुण्य होवै या धन मिलें या सांसारिक सुख मिलै ऐसी कामनासें धर्माचारण करते हैं. कामना रखनी ये भी एक जातका लोभ है.

और क्षण के बाद आपका देह नाश होनेका नक्की गिनकर पीछे उनकी क्या दशा होगी उनका तर्क करके उनका उपाय अव्वलसे ही तैयार कर रखनेका प्रयत्न करना.

जीते तक अपने आपकी चिंता करनी और अहंता ममता पूर्णवासनाए रखनी तथा मुवे के बाद जो अपनी पिछाडी अपने सगे जीते रहे होवे उनकी ममता पूर्णवासनाए रखनी, यह सब चिंता और वासना बन्धन बालजीवों के ससारकों रचता है, और उनकों सुख दुःखसें रंगता है. पुद्गल कर्म और ज्ञानके जाणकार पंडित जीव के हृदयकी सृष्टि इससें अलग प्रकार की होती है. जीते तक उनकों अपनी चिंता के कारण लक्षमें होने-पर भी ये चिंता करै नहीं; मगर कर्म प्रवाह उनकों जहां जहां ले जाय वहां वहां आपके कर्मरुप प्राणसें तिरनेका प्रयत्न किसीभी जीवकों अशांति पैदा किये बिगर करै और चिंताभार और वास-नाकों बाजुपर रख छोड द्रव्य वस्तु परिहरकर भाव वस्तुमें प्रव-र्त्तन रख्खे.

शास्त्र दृष्टिसें अपन तालाश करेंगे तो प्राणी मात्रके शरीर और मन जीवन और मानसशास्त्रके नियम न जानते भी वै नियम पालते हैं. मनुष्योंका बडा हिस्सा व्याकरणके नियम नहि जानते है तो भी कुदरतसें वे नियम ही अमलमै लेते है, और वि-द्वान भी बोलने लिखनेमै वाक्य दर वाक्य ऐसे नियम पर ध्यान देते होवै वैसा नहीं है. तो भी कुदरतसे वेही नियम आपसें ही अ-मलमें आ जाते है. इसी तरह साधुजनोंके हृदयमै और वृत्तियोंमे सत्कर्मके नियम स्वाभाविक रीतिसें पाले जाते है. दुष्ट हृदय दुष्ट प्रवृत्तिकी तर्फ धसारा करते है, वैसे साधु हृदय शुद्ध साधु धर्ममै स्वाभावसे ही प्रवृत्त होते है. इंग्रेजी मै कितनेक विद्वान Conscience

यानि अंतःकरणको Divine voice यानि ईश्वरका प्रत्यक्ष आदेश गिनते है वो अैसे भव्य और सुलभ बोधी साधु हृदयोंके लियेही है. तुलना शुद्धि प्राप्त करि कें पीछे विचार करनेका है कि अमुक व्यक्तिने अपना सनातन यज्ञ किस तरहसें प्रज्वलित किया. उक्त दृष्टिसें जीवन और संसार एक महायज्ञ रुप है उसमें सब मनुष्यके तीन वर्ग होते हैं यानि कनिष्ट, मध्यम और उत्तम. उसमै कनिष्ट वर्ग दूसरे जीवोंके पाससें फक्त स्वार्थ साधता है. मध्यम वर्ग दूसेर जीवोंके पास सेवा कराता और करता है; मगर हृदयमें शिष्य पुत्र वगैरः से वृद्धावस्थामै बदला ढूंढनेकी प्रीति युक्त कामना होती है; वो कामना पुर्ण न होवै तो निराश और दुःखी होता है और बदला न देनेवाले शिष्य पुत्रादिकोंके उपर गुस्सा करता है. और तीसरा वर्ग किसीके पाससें बदला लेनेकी आशा विगर निष्काम परोपकार करता है और पुत्र शिष्यादि सब जीवोंको समान ही गिनता है. जैसें अपन रेलवेके डब्बेमें भीडकी अंदर बैठे होवै तब दूर पर खडा हुवा मनुष्यको खडाही रहने देकर जो नजदीकमें खडा रहा होवें उसको बैठनेके वास्ते जगह देनेकी तजवीज करदेते हैं. यदि दूर खडा रहा है उनके उपर द्वेष और नजदीक खडे रहे हुवके उपर राग भी नही, दोनु समान है तो भी तटस्थ भावसें नजदीक वालेकी तजवीज करदेते हैं. वैसे ही उक्त आत्मार्थी पुरुष पुत्र कुटुंबादिक या तो शिष्य वर्गके साथ अपना वर्त्तन क्रियामें रखते हैं; लेकिन दृष्टिमें नहीं. आत्मा परमात्माके बीच अभेद भाव समजनेवालेको समस्त भूतोंमें सम दृष्टि न रक्खे उनको ज्ञानी या विरागी कहा जाता ही नहीं यह सिद्धांतको स्मरणमै अवश्य रखना चाहिये.

अध्यात्म विचार-सागरमें कदम धरनेके पेस्तर निश्चय कर

रखना चाहिये कि इस दुनियांकी भीतर जो कुछ ठाठ माठ नजर आता है वो सब बनावटी और पुद्गलीक वस्तु होनेसे असत्य है. फक्त अपने भीतर जो परमात्मा तुल्य आत्मा निवास करता है वही सत्य है. तो भी प्रश्न होता है कि ये असत्य होनेपर प्रतिबिंब काहेसे नजर आता है? जबावमें यही हैं कि 'सभी इंद्रिये बंध होने परभी अपन स्वप्न काहेसे देखते हैं!' (जबाब) निद्राशक्तिसें मालुम होता है. उसी मुजब ये सभी रचना जुठी होने परभी कर्म और पुद्गलकी शक्तिसे खडी हुइ नजर आती है, लेकिन सत्यसें देखे तो आत्मामें ही जो कुछ हे सोही है.

प्यारे पाठक गण! अब मैं कुछ ध्यान यानि मुक्ति मिलानेका अच्छे मैं अच्छा साधन है उसके बारेमें कहुंगा. ध्यान चार है यानि आर्त्त–रौद्र–धर्म–शुक्ल ये चार है. उनमेंसें दो पेस्तरके ध्यान त्यागने योग्य और पीछेके दो भजने लायक हैं. आर्त्त रौद्र अपने आपहीसे प्राप्त होते है; लेकिन पीछे के धर्म शुक्ल क्षयोपशम और क्षायिक भाव मै ही रहे हुवे हैं कि जो भाव उदय भावकी मुवाफिक स्वयमेव नही मगर अभ्याससें प्रकट होते है. उन्होंका बहुत उपयोगी वर्णन करता हूं किः–धर्म और शुक्ल ध्यान हाथ करने वालोंको हमेशां चिंतवन करना कि, सर्वज्ञ भगवंतजीने निस्वार्थतासें जो तत्त्व कहे हैं उनमें कुछ भी शंका लानेके जैसा है ही नहीं. और समस्त दुःखोंका मूल राग द्वेष इत्यादि ८ हैं. वास्ते हे जीव! वो रागद्वेषोंके बंधन तोडकर सुखी हो. यह चैतन्यकों शुभ अशुभ ये दोनु कर्म और उनके शुभ अशुभ फळरुप सुवर्ने और लोहेकी वेडी लगी हे, उससें ही भवभ्रमण होती है. जब वे टुट जायगी तब परम शांति मिलेगी. हरएक मनुष्यकों श्रीवीतराग देवकी वाणीरुप शास्त्रोंमें जो फरमान किया है उस मुजब चलना, चारित्र धर्म अंगीकार करना, गुरु आ-

दिका उपदेश सुनना और शास्त्र बांचनेकी तर्फ हरदम लक्ष रखना कि जिस्सें अध्यात्म ज्ञानके गर्भ मै पहुंचनेकों भाग्यशाली हो सकै. पुनः उक्त धर्म शुक्ल ध्यानीओंके विचारकी हारमालाका हरदम चिंतवन किया करता है कि-' यह जगतमै जो पुद्गलिक पदार्थ है सो सब अनित्य है. हे आत्मन् ! तुं उसीकों शाश्वते मानकर वैठा हैं; परंतु ज्ञान वलसें करकें अपनी भूल सुधारकें उनके उपर जो प्रीति हे वो उतार डाल और ज्ञान दर्शन चारित्ररुप रत्नत्रयीकी साथ प्रीति जोड. इस दुनियांमे तुझे कोइ मददगार नहीं है. जिनकों तुं मित्र स्वजनादि मानता है वे तेरा जहांतक पुण्य वल चलता है वहां तक तेरी खवर पुँछेंगे मगर जब पुण्य खलास हो जायगा तब कोइ तेरे सामने भी नहीं देखेंगे और उसीसेंही परमात्मा श्री वीतराग देवाधि देव है उनीकाही शरण सच्चा है, वासते अंगीकार कर. तुं अकेलाही आया है और अकेलाही जायगा. यह शरीर धन वगैरः तो जड हैं, अनित्य हैं, और तुं चैतन्य नित्य है. तेरे आत्मिक-ज्ञानादि गुण तुं भूल जाता है उसकों याद कर, उसीके संग पुनः मैत्री जोड दे. यह चारोंगति रुप संसारमै तुने असह्य दुःख सहन किये है-अव पुण्य योगसें सद्धर्मकी प्राप्ति हुइ है तो चेत, और वहिरात्माकों दमन कर-अंतर प्रकृतियोंकों मारकर जिनेंद्रजीनें वतलाये हुवे मार्गपर चल. और चिंतवन करकें केवलज्ञान और कर्मसें मुक्ति किस तरह पाउंगा ? चौदह गुण स्थानकोंमैसें तेरहवे गुण ठाणे पर कव पहोंचुंगा ? और अंतमें क्रियाका क्षयकर चौदहवे अयोगी गुण ठाणेका मालिक हो मोक्ष सुखका कब अनुभव करुंगा ? अैसी उच्च भावनाका उपयोग कर.

हरदम यादिमें रख कि तलोंमे तेल और दूधमें घी जैसें अलग है, वैसे शरीरसें जीव भिन्न है, ऐसा समझकर शरीरपर ममता मत

कर. हरएक विपत्तियें अचलतासें सहन कर. और अच्छी बुरी चीजोंकी तरफ राग द्वेप मत कर. हे आत्मन्! पांच आश्रव यानि प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्ता दान, मैथुन और परिग्रह यह पांचों पाप तुझकों दुःख देनेवाले हैं, उनकों छोड दिये विगर तुं परम सुख मिलनेकी कभी आशा मत रख, और यह संसारमें जो कुछ स्त्री पुत्र गाडी बाग बगीचे वगैरः सुखरुप मालुम होनेसें तुं उसमें फंस कर 'मोज उडाताहुं' ऐसा समझता है वो सब झुंठा है. वै तो सभी पदार्थ अशुभ कर्म के कारणरुप हैं वास्ते उनकों छोड कें शास्वत सुख तर्फ निगाह जोड. और प्रतीतिसें मान ले कि वै मोह के आवरणसें ही तुने अनंत पुद्गल परावर्त्तन कर अनंत परिताप सहन किये हैं; वास्ते शरीरकी विभूपा मत कर. उनपरका मोह उतार दे. और ज्ञान सह तप वगैरः क्रियाओं कर और अंतमें सलेखना करनेका मोका मिले तो करनेकों तैयार हो रह. कषायोंकों त्याग दे. और आगें कर्मोंकों तिलांजली दे, और इस तरह संपूर्ण धर्म शुक्ल ध्यानकी तुं आराधना करेगा, तो अवश्य मुक्तिपुरी बंदर पहुंचनेका तुझे सहेलाइसें परवाना मिल सकेगा.

इस तरह उत्तम ध्यान पर चढनेकी साथ ही संयम कि जो शांतिदाता, आधि व्याधि उपाधि नाशक और अनाथपन दूर करनेवाला है वो तेरी नजरके आगे ही रमन करता हुवा मालुम होवेगा. आंखे बंध करनेसें आपको साधु वेपमें देखने लगैगा और आंखे खोलनेसें कुल जगत् कर्म नटसें नाचते पुतले समुह जैसा मालुम होवेगा. आंखे बंध करनेसे आनंदका हास्य और खोलनेसे आश्चर्य हो आवेगा. वैसा विरागी भाव होते ही बेहद खुबसूरत पतिवत्सला स्वकिया सुखदायिनी, संयम वृत्तिके हावभावमें कुल चिंताकों भूल जानेसें, हृदय पटके उपरसें दूर हो जायगी.

विरागी अवस्था होनेसें उनमें हुवेले फेरफारसें ही संतोष न होते उनकी आंखे दिव्य प्रकारके कोइ चस्म पहेन लेवेगी तब अपने खजानेकी अंदर जो अशरफीए है उनको लडकोंके खेलनेके ठीकरेके टुकडे, आभुषणोंको शृंखलाबंधन, हीरचीरकों चींथरे और सुगंधी पदार्थोंको मोरीके गंदे जल समान लगेंगे. आहा ! कैसे आत्मोद्धारक चस्मे ? अपने वैसे चस्मे ताकीदीसे मिला सकें वैसा प्रभुके पास प्रार्थना करो !

गृहस्थो ! आज इस विषय पर वहुत बोला गया है और तुमारा किंमती वख्त मैंने ज्यादे रोक लिया है, तो भी इस सभामैं श्रोता गणमेंसें जो इस विषयके अधिकारी नही थे वे रुखसद हो गये हैं, मगर जो सच्चे आत्मानंदि है वै खंतसें इस व्याख्यानकों सुन्नते स्थित हुवे मालुम होते है ऐसा उन्हीके मुख मुद्रापर रमन करते हुवे आनंदसें ख्याल हो रहा है. तो भी अब ज्यादे वख्त रोकनेसें मिष्टता कम हो शुष्कभाव प्रकट होनेका संभव होनेसें मैं मेरा व्याख्यान समाप्त करता हुं. ”

ऐसा व्याख्यान कारका कथन सुनने ही मिजलस के विविध लोगों के मुंहसें ऐसे आवाज होने लगे कि–‘ शुष्क भाव नहीं मगर मिष्टतामें अभिवृद्धि हुइ जाती है वास्ते व्याख्यानकों आगे चलने दो. ’ इस सबब के लिये विवेकचंद्रने कहा कि–‘ जब कुल सभा के हरेक सभ्यजनोंकी सुननेकी ही इच्छा है तब लाजिम है कि थोडे वख्त के लिये उनका मान समालने के वास्ते व्याख्यान शुरु ही रक्खो. ’ इस तरह सभाजनोंका अत्याग्रह होनेसें आत्मचंद्रने पुनः व्याख्यानकों आगे चलाया कि–‘ देखिये, कल्यान मंदिर के कर्त्ता पुन्यपादश्रीने एक श्लोककी अंदर कथन किया है कि, चंदनका वृक्ष वहुत ही मनहर और सुगंधिवंत है, उस सबबसें उनकी चारो

और विषम सांप मजबूतीसे लिपटे हुवे हैं; मगर उन सभी सा-
पोंको वहांसें सहजतासें दूर हठाना होवै तो एक मयूर लाकर वहा
रख्खो कि तुरत वे सांप अपना जान बचानेके लिये भग जायेंगे.
इसी मुजब आत्म रुप चंदन तरुकों रागद्वेषादि अष्टकर्मरुप सांप म-
जबुतीके साथ लिपटे हुवे हैं, अब तुमकों जो उन सापोंकों हठा-
नेकी दरकार होवे तो भगवत नामस्मरण रुप मयूरको एकाग्रचि-
त्तसें खडा कर दो तो फौरन आत्मरुप चंदनतरु परसें अष्टकर्मरुप
सांप भग जायेंगे ! और कर्मरुप साँपोका नाश होनेसें तुम परमा-
त्मा स्वरुप बनजाओगे. वास्ते उमीद रखता हुं कि आजरोज जो
विचार मैंने तुमारे समक्ष रजु किया है उसकों अमलमें रखकर
स्व आत्मोद्धार करोगे. इतनाही अंतमें बोलकर मै व्याख्यान समाप्त
कर अपनी जगह पर बैठ जाता हुं. ”

जयजय ध्वनिके बीच आत्मचंद्र अपने आसन पर स्थित हुआ
बाद सभाजनोने उनका सत्य अंतःकरणसें उपकार जाहेर किया तथा
आत्मिक धर्म और आत्मचंद्र की प्रशंसा सहित सभाजनोंने अपनी
अपनी जगहपर जानेको मार्ग ग्रहण किया.

---

## (४)

## ’ तारक ’ तोफानमें फस गइ !

---

दूसरे रोज अवकाशके वख्त पेसेन्जर वख्त व्यतीत करनेके
लिये इकठे हो गत दिनके व्याख्यानका विषय निकाला. जिनलो-
गोंको मजाह न आइथी वे लो उस व्याख्यानको निरस, शुष्क,
और तद्दन अरंजन था औसे अभिप्राय के साथ कहने लगे. और
जिनको बहुत मजाह आइथी उन्होंने उनके विरूद्ध अभिप्राय बत-

लाइ बडी प्रशंसा करनी शुरु की उस वख्त वहां बैठा हुवा एक जैन बोल उठा कि—तुम आत्मचंद्रके व्याख्यानकी तर्फदारी करते हो वो बेशक सत्य है. मै बडा इस्से खुश हुवा हुं. मै आत्मचंद्रका परिचवंत हुं. और उनके उंचे ज्ञान शक्तिके मामलेसें मै पूरा वाकेफगार हुं. यह तो उन्होंने पहेला समागम, पहेला भाषण होनेके सबबसे ही आपको अध्यात्म ज्ञानका पहेले पाठका ही दिग् दर्शन करवाया है. जैन तत्त्वका गहरा हिस्सा कि जिसको जैन फीलोसोफी कहेते है उसका तो दर्शन भी नहीं करवाया है. जीवा जीवकी गहन समझ, षट् द्रव्य, नय, निक्षेप, भंगजाळ, नवतत्त्वादिकका दिग्दर्शन तो अभी उन्होंने अपनको करवाया ही नहीं. मै समझता हुं कि वै किसी वख्त फिर अपनको वो प्रसादी देयेंगे सही ! तथापि गइ कल जो अपनने मिलाया वही भी बडा किमती है. अैसा बोलनेवाले जैनीके वाक्यको सब लोगोने अनुमोदन दिया. और उस पीछे पृथक् पृथक् विषयोंके उपर वात चलाये बाद ज्यादे वख्त हो जानेसे वै सभी अपनी अपनी जगहपर चले गये. इस तरफ स्टीमर मै मुसाफर आनंदसें वख्त गुजारते थे. और स्टीमर भी पूर जुस्सें मजल दर मजल करती हुइ आगे बढतीथी. कुछ रोज इसी तरह निर्विघ्नतासें पसार हुवे इतनेमें एक अैसा कमनसीब बनाव हुवा कि S. S. तारकको तोफान लागु होनेका वख्त नजर आया. कुदरतकी अकल गति है. एक पलके पेस्तर वो इन्सानको हंसाती है और एक पलके बाद पेटभरके रुला देती है. स्टीमर तारकके बारे मै भी वैसा ही बना. तोफानी हवा चलने लगी. केप्टन बडा बाहोश और अनुभवी होनेसे मुसाफरोंको इत्तळा दी कि—' कोइ भी मुसाफर अपनी जगह छोडकर तुतक या पिछले भागपर न जावै; क्यों कि तोफान होनेका मोका मालुम होरहा है. वास्ते हिम्मतसें अपने जगह

पर बैठ रहेना. दरियावमें जबरदस्त तोफानके साथ अपनको बाथ भीडनेकी है, इतनेमै तो दरियावने बडा भारी भयंकर रुप पकड लिया. और जबरदस्त मोजे--तरंग एकके पीछे एक तुरंता तुरंत आने लगे, कि उनके आगे स्टीमर कुछ हिसावमै न थी, असे तरंगोने सख्त तोफान मचाया और स्टीमरकी सलामती रहनेके बारेमें सभीका शंकाशील मन बनादिया. स्टीमर बडे भारे तोफान मै फँस जानेसें खलासी लोग अपनी इज्जतके खातिर मुसाफरोंको बचानेके वास्ते बहुत जबरदस्त महेनत करने लगे;मगर पवनका फिरस्ता दरियाइ फिरस्तेके साथ खफा हो रहा था वहां किसीका भी जोर चले वैसा था ही नही. पानी तो स्टीमरको अपने पेटमें ही लेनेका इरादा करता हो वैसा वख्त आ पहुंचाथा. केप्टनने दुर्बीनसें देखा तो तोफान भारे जोशमै मालुम हूवा, और उतनेमें गर्जना और वीजलीके साथ वारीश होना शुरु हो गया. तब तो मुसाफर बहुत घभराहटमें फंस गये और परमात्माका स्मरण करने लगे.

विवेकचंद्र और आत्मचंद्र हरएक मुसाफरोंको हिम्मत देतेथे, उससें कुछ हिम्मत रखकर बैठ गये; मगर थोडीसी देरमें एक असा वडा राक्षसी मोजा आया उसने स्टीमरको उलटी लेटा देनेका वख्त ला दिया. लेकिन मुसाफरोंके पुण्यबलकी प्रबलतासें दूसरे मोजेने उसें अद्धर उठा ली उस्सें बच गइ. विवेकचंद्र स्टीमरको बचानेके वास्ते सब तरहकी योजना कर रहाथा और आत्मचंद्र मुसाफरों सहित प्रभु प्रार्थना करके पीछे हींमत और सहनशीलता उस प्रसंग संबंधी समझा रहाथा. सुभाग्यसें सब तोफान शांत होनेका वख्त नजर आया. वरसाद बंध हो गया. आकाश निर्मळ होने लगा. मोजे नरम पड गये. उसीसें कुछ शांति फैली. और मुसाफर अपनी सलामतीके लिये स्टीमरके कठेरेके पास आकर देखने लगे तो दूर

पर एक स्टीमर ठहरी हुइ नजर आइ. और दूसरी तर्फ सुंदर हरी बेट देखनेमें आया. और कितनीक होडीभी स्टीमरकी तर्फ आती हुइ नजर पडी. स्टीमर तारक इस वख्त धीरेसें चलतीथी. उस वख्त कितनेक अधैर्यवंत मुसाफर केप्टनकों कहने लगे कि, 'अपनी स्टीमर आजके तोफानसें जर्जरी भूत हो गइ है वास्ते खडी रख-कर हमकों होडीयोंका आश्रय लेने दो; हम वो सामने बोट खडी है उस्में बैठकर हमारा जान माल बचाना चाहते हैं.' यह सुनकर केप्टन दिलगीर हुवा और कहने लगा कि—'तुम झूंठी लालचमें मत फँस जाओ. यह जगह सभी स्टीमरके अैसेही हाल होते हैं. यह 'युवानीका उपसागर' है, वास्ते इस पानीके योगसें तोफान लागु हो जाता है और केप्टन निर्बल मनका होता है तो बहुत खराबीमे स्टीमर फँस जाती है. मगर मजबूत आत्मबल और ज्ञानवाला होता है तो बेधडकसें मार्ग सहीसलामतीसें पसार करता है. अब तो-फान शांत है वास्ते दहेशत मत रखो.'

इस मुजब खुलासा किये तोभी जो डरपोक और अल्प वि-चारवंत थे वैसे लोगोने उस बात पर यकीन न रखा तब फिरसें केप्टनने कहा—ये बेटकी मनहरतासें मत ललचाना; क्यों कि उन्हे लोगोंके निवाससें भरपूर है वास्ते वहां जानेसें पायमाल हो जा-ओगे. जो खडी रही स्टीमर मालुम होती है वो इच्छित स्थलपर न पहुंचावेगी. वो अपनी मरजी मुजब बंदर करती है, यानी आठ बंदर है वहां जाती है और वो बंदर जानेसें तुम फँस जाओ-गे. वहां सुख मिलनेकी कोइ सोइ नहीं हाथ लगेगी, और तुरत अच्छा बंदर मिलानेमें भी निराश होवोगे; वास्ते किस्मत बुलंद होवे तो मेरा कहा मान लो.'

इतना कहा तो भी अविश्वासु मंडलने वो बातपर ध्यान न

दिया और अपनी अरजी मुजबही करना मुकरीर कर केप्टनको अपना छेवट का ठहराव रजु किया, तब केप्टनने ना कहा. तुरत जवाब सुनतेही सोरगुल मचा दिया—हाहु करने लगे—रोने लगे और धामधूम मचाने लगे. यह देखकर कितनेक मुसाफरोंने कहा कि—' जब इनकोंही दुराग्रह है तो क्यों रोकने चाहियें ? ये जाने और इनका नशीब जाने. आपसें जो कुच्छ बना सो भला किया. अबइन्हों कोही दुर्गति प्यारी है तो उसमै आपका क्या उपाय ? ' केप्टनने आसपासका रंग देखकर स्टीमर खडी रख्खी और निर्बल मनके मुसाफरोंके लिये तुरत स्हामनेसें आइ हुइ नावोंको स्टीमरके साथ लागु की कि वै अपना अपना सरंजाम लेकर खुशीके साथ कूद पडे. नावोंकों तुरत बेट तर्फ हंकार दी और थोडेही वख्तमें किनारे पर पहुंचादी.

---

## ( ९ )

## S. S. ' हिंसक ' के बंदरो.

---

अब कुछ समय अपन स्टीमर ' तारक ' कों बाजुपर छोड उनमैसें जो मुसाफर उतर गये है उनकी स्थिति तर्फ नजर करेंगे.

मुसाफर जिस किनारेपर उतरे उस टापुकों अपन ' मोहपुरी ' नामसें पिछानेंगे. वहांका कस्टम सुप्रिन्टेन्डेन्ट दुर्गुणसिंह था. वो उनके पास आया और कहने लगा कि—' इस गाँव के राजाजी अतिथियोंकों आदर सत्कार करनेमें हमेशां तत्पर रहते हैं, उनका मुझे खास फरमान है कि बंदरपर आते हुवे अतिथिकों उन्हीकी मुलाकात के लिये ल्याना. उससें सब तुम हमारे साथ चलो. '

मुसाफर तुरंत ही उनकी साथ दरबारगढमें गये. नगराधीश महाराजा अपने सामंत सहित कचहरी भरकर बडे ठाठसें बैठा था. आसपास अठारह सामंत बैठे थे, और निर्दयसिंह, असत्यसिंह, चौर्यसिंह वगेरः नामवाले थे. ये सामंत बडे कुशल और पराक्रमी होनेसें बहुत जगह आपके मालिककी तर्फसें जंगमें रंग रखनेसें राजाकी उनपर बहुत ही महेरबानी थी. मुसाफर कचहरीमें आते ही राजाको व्यवहार मुजब दंडवत किया. राजाने उनोंका अच्छा सत्कार किया, और कहा कि-समुद्र शांत हो जाने तक तुमकों यहां ही रहना पडेगा और खाने पीने रहने और वाहन वगैरः का बंदोवस्त राज्य तर्फसे किया जायगा. अतिथि खुश हुवे और राज्यमंदिरमें रहने लगे. रफते रफते राजाका प्रेम अतिथिओंपर बढता गया और उनकों लेकर उक्त सामंतें भी उनकी चाहत रखने लगे. और उन एक दूसरों के वीच मजबूत दोस्ती हुइ. सोवते असरकी कहनावत मुजब सामंतों के नाम माफिक के गुणोंकी असर अतिथियों के उपर हो गइ. खुदमें वासना जन्म स्थिति तो थी उनकों एकदम फैलकर घुमने लगी. सारासार के ज्ञानकों बाजुपर रखकर राजा साहबकी कृपाकी मुस्ताकीपर चाहे वैसें करने लगे. जिस नगरमें धर्मका नाम न था और भावना ऐसी वस्तु न थी; वहां ऐसी वासनामय जीवन के अंतःकरण कुकर्ममें निमग्न हो रहेवें उसमें क्या नवाइ? बहुत मुदत तक वे लोग वहां रहे और मानव धर्म विरुद्धकी अपनी जींदगीका एक हफता पूरा किया. बाद उन्होंकों जन्मभूमि याद आइ. स्टीमर 'तारक' में आगे बढनेका सद्विचार था वो बंध पाड दिया और पीछे हठ जाने के विचारपर स्थित हो गये. और स्वदेश जानेका इरादा महाराजाकों रोशन किया. महाराजाने कहा-'तुमारी अनुकरण शक्ति बडी

अच्छी है. हमारे सामंतों के गुण तुमने थोडेसे वख्तमें ग्रहण कर लिये. साधारन मनुष्य दोस्ती करते है वो थोडी मुदत तक कायम रहती है और वहुत मुदत तक रहेवे तो जीवन तक निभै; मगर मेरे साथ जो दोस्ती करता है तो सखाकी माफक ७० कोडाकोडी वर्ष तक दोस्ती कायम रखतांहुं उसीसें मुझे चिरंजीव पद मिला है. अवसें तुम अच्छे भाग्यसें बहुत मुदत विगर दोस्ती विगर न रहोगे. उनके वारेमें मै तुमकों अभिनंदन देता हुं. तुम वतन जानेका इरादा रखते हो; मगर यह बंदरसें तुम वहां जा सको वैसा नहीं है. यहां के बंदर पर ठहरी हुइ स्टीमर तुमारे बंदर तर्फ नही जाती है. वास्ते वहां जा सकै वैसी स्टीमरमें जाओ. जहां जहां स्टीमर जावे वहां के बडे अफसरपर तुमारे हमारे वीच जो स्नेह हुवा है उसीकी खातिर वसीला पत्र लिख दुगा; जिस्सें तुमारी अच्छी खातिर वरदास होगी.' अतिथियोंको मालुम तो हो गया कि–'स्वदेश फिरते फिरते जाना पडेगा, सीधी स्टीमर नहीं जाती है जिस्से गोथे खाने पडेंगे, तो भी वसीले पत्रसें हरकत नहीं होयगी वास्ते कुछ हरज नहीं. देशाटणका लाभ मिलेगा.' ऐसा शोचकर वसीला पत्र के रुके लिखवा लिये यानि यमपुरी, तिर्यंचनगर और निगोदपुर के अफसरपर के लिखवा लिये. उसमें लिखा गया था कि–'हमारे शहरमें वहुत मुदत तक रहकर हमारे परम स्नेहाधीकारी हुवेले ये पत्र ल्यानेवाले हमारे महेमानोंको हमसें वनी जितनी उतनी विभूतियें हमने दी है और अव तुम भी उन विभूतिका मरतव समालने के लिये तुमारे हमेशां के नियम मुजव इन्होंकी आदर आगता स्वागता करियो, और उन के मन जीत ले कर वहोत मुदत तक तुमारे शहरमें निवास कराइयो.'

यही वसीले पत्रोंसें 'तारक' के कमनसीव मुसाफर खुश हो

गये और एक लेकर बंदर पर खडी हुवेली 'हिंसक' स्टीमर पर स्वार हुवे. उनको ये स्टीमर ना पसंद पडी; क्योंकि अंदरका देखाव काला था मोहराजाके नये महेमानोंके वास्ते सब सबके दर्जे मुजब कृष्ण, नील, कपोत जैसी तीन केबीनयी उनमें उन्होंको जगा दी; और केप्टन दुर्जनसिंहने अवकाशके वख्त वातचीत करनेके लिये भी कहा. जब केप्टनको फरसुद मिली तब पेसेंजरोसें वात्त विनोद शुरु किया और कहां कहां स्टीमर बंदर करेगी वो वात निकली तब मुसाफरोंने उनकी हकीकत पूछी, तब केप्टनने कहा कि-" तुमको वो चीना सुनतेही कंप छुटेगा और वही कंपके नावे तुमारा जीवन गुजरेगा. तुमको 'तारक' केप्टन विवेकचंदने और आत्मचंद्र वगेरः साधुजनोंने बहुत बहुत समझाये थे और स्टीमरमेंसें न उतरनेका भी कहाथा, लेकिन तुम उन उपसागरमें तुमारा समतोलपना न समाल और मनोबल आत्मबल की तालीम न ले सके अैसी खबर महाराजाके सामंतो द्वारासें मुझको मिली है. अब तुमारा सोक या शोच निकमा हो पडेगा. यदि मैं मोहराजाका तावेदार हुं, तदपि खुल्ला कह देता हुं कि-तुमारे जैसे बहुतसे महेमानोंको अपने सपाटेमे ले कर अढारह सामंतोंकी मददसें उनको संगतिरुप महापापके खड्डेमें तरबोलकर पीछे इस स्टीमर मारफत उपर कहे गये बंदर तर्फ रवाना कर दिये गये हैं. और वहां बेसुमार मुद्दत तक उन्होंने नसी हुइ विभूतिके लिये महादुःख सुक्तने पडते हैं. यमपुरी वडा स्थल है और उनके सात हिस्से हैं. उन सबमें एकसें एकमें ज्यादा दुःख देनेमे आता है. वहां कितनेकको मैं उतार दुंगा. और मैं जुदे जुदे हिस्सेमें सामंतोके साथ जैसी जैसी जिनकी प्रीति थी वैसी वैसी दुःखयातना भुक्तनेको सुपरद कर दुंगा. बाकी रहे हुवे को निगोदपुरमें उतार दुंगा कि वहांके दुःखोंने यमपुरीके दुःख भी

भूल जाओगे. सामंतोंके साथ प्रीतिके रंग मुजव वहां रहना होगा. और पीछे मै वाकीके मुसाफरोंकों तिर्यंचपुरमें त्रस स्थावर ऐसे दो हिस्से जहांके दूःख सिरफ केवलीही जानते हैं वहां उतार कर मेरी फर्ज पुरी कर दूंगा.'

यह वर्णन सुनकर मुसाफर तोवाह तोवाह पुकारने लगे और वहां न पहुंचाते दुसरी जगे पहुंचा देनेके वास्ते केप्टनकों वहुत प्रार्थना की; मगर उनने निमकहलाली समालनेके सववसें वैसा करनेकी साफ ना कही. और कहा कि–' प्रीति करनेके वख्त पीछे देखा होता तो ऐसे बुरे हाल न होते; मगर अव तो किये कर्म भुक्ते विगर छुटकाहीं नहीं है.' यह ठहराव भरा जवाव सुन मुसाफर वहुत संताप और रुदन करने लगे. स्टीमर तो पूर झडपसें रस्ता पसार करती हुइ थोडेही समयमें तिर्यंचपूर जा पहूंची और हूकम मुजव केप्टनने स्टीमर खडी रखकर जिन जिनकों उतारनेके थे उन्हींकों वहां उतार दे, मिले हुवे अधिकार मुजव उन्होंकों उनका वंदोवस्त किया के तुरतही मुसाफोरोंके शरीरका देखाव फिर गया. और मुकरीर की गइ जगह रखकर स्टीमर आगे चलाइ और आगे चलते दरियावमै तोफान लागु हुवा. काल रात्रीका प्रत्यक्ष दर्शन हुवा– अंधेरा छा गया और इतनेमें वदबु आने लगी. मुसाफरोंकों श्वास लेना भी मुश्केल हो पडा उस्सें वहुत घभडाने लगे. केप्टनने सूचनां दी कि ' यमपुरीका वंदर आ गया है, यहां उतरने वाले तैयार हो जाओ.' ऐसा कहकर वंदर आतेही वहांके अधिकारी मूसाफरोंकों अपने अपनेके मुकरीर किये गये हिस्सेमें उतार दिये. वहां जानेही विकरालरुप वाले हो गये और उन्होंकों दुःखदावानलमें सुलगाने लगे. स्टीमर अपनी फर्ज अदा करकें आगे चली और जब निगोदवंदर आ पहुंचा तव वहां उतरने वालोंको वहां उतार

कर क्रमवार नियत कर दिये. स्टीमर खाली हो पीछी मोहराजाकी नगरी तर्फ लोट गइ.

---

(६)

## S. S. 'तारक' के बंदर.

---

स्टीमर 'तारक' ने मरजी मुजब चलने वालोकों मोहक बेटमें उतार दिये बाद वे विचारोंके जो बुरे हाल हुवे वो तो अपनने देख लिया. उनकों वहां उतारकर वो सफरी जहाज ने पुनः अपना प्रयाण सन्मुख दिशामें चालुही रख्खा था.

उस वख्त दरियाव बिलकुल शांत था, स्टीमर भी हमेशांकी झडपसें चलती थी और मुसाफरोने भी आनंदसें वो मुसाफरी शुरुही रख्खी थी. 'युवानी उपसागर' कि जो तोफानी स्थल था उस्कों पीछे छोडकर आगेका परिपक्व मार्गरुप समुद्रमें जा पहुंची. उस जगह तोफानका नाम भी न था. दरियाव विस्तीर्ण था तो भी तदन शांत था; उसकों पसार करनेमें स्टीमरकों वहुत देर लगीथी. इतनेमें एक संध्या वख्तमें विवेकचंद्रने अपने पेसेंजरकी अंदरसें उस बंदर के अधिकारी थे उन्होंकों इत्तला दी कि अब थोडेही वख्तमें तुमारे यह स्टीमर छोडनेकी है; तुमारे उतरनेका बंदर नजदीक आ पहुंचा है. यह सुनकर जिसके पास पैसेका जोर था उन्होंने तो ज्यादे मुसाफरी लंबानेके लिये ज्यादे किरायेकी दूरके बंदरकी टीकीट ले ली; मगर जिनके पास खर्चा नही था उनकों तो उतरता ही मंजूर था, उससें दिलगीर हो बैठे थे. इतनेमें तो रात पड गइ, निंदके तावे हो गये और अंधेरा पक्ष होनेसें स्टीमरकी

अंदर विजलीकी चिरागे शिवाय कुल समुद्र भरमें अंधेरा ही छा रहाथा. जब आधी रातका वख्त हुवा तब स्टीमरसें दूर भागमें कुछ गडबड होती हुइ कानपर आइ और मुसाफर लोग स्टीमरके कठेडे पर आकर देखने लगे तो अंधेरेमें क्या नजर पडे ? कुछ मालुम न हुवा. हां, कुछ थोडा थोडा उजाला वढता मालुम होता था और समुद्रके पानीका रंग कुछ वदलाया मालुम होता था और धीरे धीरे प्रकाश वढता हुवा प्रातःकाल जैसा देखाव देने लगा. यह आश्चर्य देखकर मुसाफर ताजुव हो गये, और केप्टनकी के-बीनके पास जाकर उसका सवब पूछने लगे. केप्टनने जवाव दिया कि–' स्टीमरने अब भर समुद्र छोड किनारा हाथ किया है और अभी पहेला वंदर ज्योतिपिपुरका आ पहुचेंनके सववसें स्टीमर खडी रहेगी. वो वंदर दिव्य ज्योतिवंत होनेसें अकाल वख्त होने परभी सूर्योदयके वख्तका भास हो रहा है. वहां ज्योतिषि देव रहते है और उनके सुख मनुष्योंसे ज्यादे है; लेकिन स्थूल पुद्गलिक सुख होते है. वासना ज्यादे और भावना थोडी होवे वैसे जीव वहां निवास कर सकते है. जिन मुसाफरोकी वहांकी टीकीटे हैं उनकों वहां उतारे जायेंगे. ' ऐसा सुनकर मुसाफर देवांगी नगर तर्फ दूरसें झांखने लगे तो प्रकाशके पुंज रुप स्थल मालुम हुवा. देखते ही देखतेंमें वंदरकी गोदी आ पहुंची कि स्टीमरकों नांगर दी. उ-तरनेवाले मुसाफर अपना अपना असवाव लेकर एक दूसरे पहि-चानदारोंसें मिलकर उतरने लगे. उस वक्त उन्होंसें केप्टननें कहा ' इस वख्त हम लोग खर्ची खुट हैं; वास्ते तुम जो अभी मुक्ति पु-रीका असीम वर्णन कर रहे हो वहां आ पहुंच सके वैसा मोका नहीं है; तोभी उमेद रखते है कि जब फिर दूसरी स्टीमर उसी तर्फ जानेवाली आ पहुंचेगी तब यहांसे ' पैसे ' पैदा करकें जरुर

मुक्तिपुरीका अखंडानंद भुक्तने लिये आयेंगे. केप्टनने उन्हों की सद्भावनाके वास्ते धन्यवाद दिया और कहा कि-तुम अैसा इरादा रखते हो; मगर भूल है. यहां पर तुम जो कुछ पैसेके जोरसें आ पंहुचे हो उनके व्ययसें ही यहां रह सकोगे. यह सुखधाम है, कल्याणधाम नहीं है. तुमने उपार्जन की हुइ वासना मय भावनाके जोरसें यहां तुम तुमारी मानवसृष्टीसें असंख्य गुना सुख मिला सकोगे लेकिन और पैसा जमां करकें अंतके बंदर मुक्ति पुरीमें जानेका इरादा रखते हो वो फजूल है; वास्ते यहां तुमारा दीर्घायु पल्योपम सागरोपम वर्षोंका है वो पूराकर स्वदेश जानेकी इच्छा रखनी दुरस्त है. वो उत्तम घर हाथ लगे पीछे वहां वासनाजन्य नहि मगर भावनामय जींदगी गुजार कर अनंत द्रव्य इकट्टा कर आत्मचंद्रकी तरह मुक्तिपुर बंदर की टीकीट खरीद वहां आइयो. देखो, मैं यह विना कहता हुं उसें तुम दिलगीर हुवे मालुम होते हो मगर दिलगीर होनेकी कुछ जरुरत नहीं है. तुमारेसें आगे देवपूताका बंदरपर उतरनेवाले बाकीके मुसाफरोंकी भी यही दशा होनेवाली है. ज्यादे किराया देनेसें उनकों तुमारेसें कुछ ज्यादे सुख ज्यादे वख्त तक मिलेगा; मगर अंतमें तुमारी तरह उनकों भी किये बिगर छुटका ही नहीं है." मुक्ति पुरीके अभिलाषि मुसाफरोंने केप्टनका कहना सुनकर उनकों मिलकर उतर गये. और ल्याये हुवे भलामन पत्रोंके मुजब अपने अपने स्थलपर चले गये.

तुरंत वहांसे स्टीमरने कुच मुकाम किया और 'देवपूताने' की तर्फ चली. अवकास वख्त देखकर केप्टनने हरएक मूसाफरोंकों इकठ्ठेकर स्टीमर अब कहा कहां बंदर करेगी उसकी समझ देनी शुरु [illegible] कि:-'प्यारे बंधुओं! अब तुम थोडे समय तक मेरे साथ हो. [illegible] स्टीमर देवपूतानाके दरियावमें दाखिल हो चुकी है. वो

स्थल देवांशी होनेसें वहां दैवी प्रकाश कायमही रहता है. वास्ते वहां तुम रात्रिकी राह मत देखियो. देवपूनाना वडी दुनियां है, वहां तीन खंड है यानि देवलोक, ग्रीवेक और अनुत्तर विमान ये तीन हैं. उनमेसें पहिले खंडके वारह, दूसरेके नौ और तीसरेके पांच विभाग हैं और एक एक विभाग करते दूसरे दूसरे ज्यादे ज्यादे सुख हैं, और लंवे समय तक सुख भुक्तनेंकों मिलता हैं. मनमें इच्छा ही होनेसें काम फौरन हो जाता है. तुमसें सब वातसें वो चढते दर्जेके हैं; लेकिन मोक्ष नगर वे मनुष्य गणकी तरह नहीं जा सकते हैं. मनुष्यकों मिली हुइ निर्जरा–कल्याणकी वक्षीसके आगे वे कुछ विसातमें ही नहीं है. और निर्जराकी गैर हाजरी के लिये ही मुक्तिपुरी नजदीक होने पर भी वे वहां पहुंचनेकी ताकत नहीं धरा शकते हैं. मनुष्य इरादा करे तो मोक्ष नगरमें सीधासट जा सकता है. ज्योतिपिपुरके रहीसोंसें देवपूनाना के रहीसोंमें वासना कम और भावना ज्यादे होती है; मगर तीनों खंडवालोंमें क्रमवार ज्यादे कम वासना होती है.' इन स्थलोकी माहेती मिलाकर सभी मुसाफर अपनी अपनी तैयारी करने लगते थे, इत्तिफाकमें एक मुसाफरने केप्टनसें सवाल किया कि–' अव हम तुमसें छूटे पडेंगे. वास्ते हमारे अन्य मुसाफरोंकी यानि मोहक वेटमें जिद्द करके उतर जाने वालोंके कुछ एजंट मारफत खवर मिले होवे तो कहीए कि उन्होका क्या हाल हवाल हुवे हैं ?' केप्टनने ज्ञान वलसें मिले हुवे खवर मुजव कहा कि ' वे कमनसीव मुसाफर जिद्द करके उतर पडे वाद निर्वल मनके वश हो दुष्ट संगति द्वारा पापपुंज एकत्र कर अधोगति हाथ कर वैठे हैं. वहां महा व्याधि भुक्तते हैं और अपार व्याधिका वर्णन करनेका स्थान न होनेसें उन्होंकी तर्फ दयाकी नजरसें देखना वही व्याजवी समझता हुं '

( ७ )

## बंदरपर पांव रखते ही आत्मचंद्र ज्योतिमें ज्योति-रुप बन गया !

वार्त्तालाप चल रहा है. इतनेमें मुसाफरोंकी नजर दूर मालुम होते हुवे किनारे की तर्फ गइ और कभी न देखनेमें आइ थी वैसी मनोहरता वहांपर देखनेमें आइ—रत्नज्योति के प्रकाशसें कुल् किनारा प्रकाशसें चकचकित होत हुवा विद्यमान था. अशाश्वत वस्तु के अभ्यासीओंको शाश्वत वस्तु के दूरसें दर्शन होते ही आश्चर्यकी उर्मिये स्फुरने लगीथी. कुल् समुद्र और चोगीर्द सुगंधीसें महक रहाथा. मुक्तिपुरी के सुखसें जो मुसाफर विन वाकेफगार थे वे तो यह रचना और भविष्यमें मिलने के सुख—इन विचारोंसे और दर्शनसें दिग्मूढ हो गये. इतनेमें तो स्टीमर देवपूताना पहेले खंडमें दाखिल हुइ के वहां के उतरनेवाले मुसाफरोंने बाकी मुसाफरोंसे और विवेकचंद्र, आत्मचंद्र आदिकी भेट लेकर किनारेपर उतरना शुरु किया. उस वख्त विवेकचंद्र और आत्मचंद्रने उतर जाते हुवे मुसाफरोंको उस खंडकी रीति रसम कानून वगेरः की अच्छी तरहसें माहेती और नशिहत दी.

जो मुसाफर वहां उतरनेवाले थे उन्होंने वो नाशिहत शिरपर चढा ली और उतर पड कर अपने अपने स्थानपर चले गये. स्टीमर तारकने वो प्रथम खंड के बारह बंदर 'टच' करकें दूसरे खंड के नौ बंदर करने के विभागोंमें दाखिल हुइ. पहेले खंडसें उस खंडकी शोभा, भव्यता और सुख सामग्री बहुत ज्यादे थी. फक्त पहेले खंडसें बस्ती कम थी; और स्वाभाविक नियम भी है कि उतरते

दर्जेकी चीजोको मुकाबलेमें चढते दर्जेकी चीजे कम होती हैं, इसी तरह वासनामय जीवनसें भावनामय जीवन कम होते ही हैं. यहां पर उतरनेवाले मुसाफरोको उतार कर तारक नैल बंदर करके तीसरेखंड कि जिन के बंदर पांच थे उनमें दाखिल हुइ. और पांच बंदर किये. उस खंड के सुख संपत्ति भव्यता मनोहरता अवर्णनीय और दूसरे खंडोंसें उच्च दर्जेकी थी. अंतिम बंदरका नाम सर्वार्थ सिद्ध विमान था. वो नाम माफिक कार्य सिद्धि करनेवाला था; क्यों कि वहांसें फक्त एक जन्म के बाद मुक्तिपुरीमें मुलाकात हो सकती है. फक्त किंचित् वासना रह जानेसें ही मोक्ष बारह योजन दूर रह जाता है; तो भी यहां के वतनी 'मोक्ष के मोती' रुप गिने जाते है. कुल् देवपूताना के वतनि देवोंसें यहां के देव सर्वोत्तम गिने जाते है. वहां विवेकचंद्र केप्टन और आत्मचंद्र इन दोनू के शिवाय दूसरे सब मुसाफर उतर पडे. स्टीमर को अब एकही बंदर और थोडेही पंथका करना बाकीमें रहा था. तुरंत स्टीमर उसी तर्फ रवाना हुइ और फौरन मुक्तिपुरी यानि सिद्धनगर बंदरपर जा पहुंची. वो बंदरका प्रदेश पिस्तालीश लाख योजनके विस्तारवाला और अत्यंतही मनहर था. इन जैसा प्रदेश प्रकाश और सब बातोंमें तीन लोक भरमें दूसरा मूकाबला कर सके वैसा थाही नहीं. वहांके वतनी सिद्ध भगवंत अंत प्रदेशके अंतमें निवास करते हैं, और वे परम ज्योति स्वरुप हैं. जन्म जरा मरणादि कुल् उपाधियोंसें रहित सादि अनंत स्थितिवंत अखंडानंदी और सब भाव जानने वाले हैं. ज्यादे क्या कहूं; मगर उनके सूखानंदकी पूरी तोरसें हकीकत लिखनेमें केवली भगवंत थक जाये तो मै अल्पमती और निर्माल्य कलमधारक क्या वर्णन लिख सकु ? इसें टूंकानमें ही पतानेके लिये इतनाही कहुंगा कि सृष्टिमें कोइ

अैसा प्राणी नही है कि एक पल भर भी वैसा आनंद अनुभवमें लेता होवै. अैसा आनंद पानेकों विवेकचंद्र और आत्मचंद्र ज्ञानसह क्रिया रुप धनसें और अध्यात्म वलसें करकें केवल भावना मय जिंदगी पसार कर केवल ज्ञान. केवल दर्शन उपार्जन कर फतेहमंद हुवे. स्टीमर ' तारक ' नाम प्रमाणे सव मुसाफरोंकों भव समुद्रसें तिराकर इच्छित सिद्ध स्थानपर पहुंच गइ, और गर्भपुरीसें यात्रार्थ निकले हुवे आत्मचंद्र और विवेकचंद्र इन दोनोंकों वंदर पर पहुंचा दिये. और वे जैसे किनारे पाँव देते हैं वैसेही—

**प्रकाशित परमज्योतिमें ज्योतिरुप हो गये !**

---

## उपसंहार.

---

मोक्षपुरीकी टीकीट लेकर गर्भपुरीसें रवन्ना हुवे आत्मचंद्र की दीव्य यात्रा यहां पूर्ण हो गइ. S. S. ' तारक ' और S. S. ' हिंसक ' इन दोनोंकी दिशायें अलग अलग होनेसें इन दोनोंके मुसाफरोंका पुनः मिलाप करा देनेमें लेखककी लेखिनी अशक्त है; मगर यात्रा शुरु करनेके वख्त जिन मातापिताओंने आत्मचंद्रको सुखरुप मुसाफरी कर जल्दी पीछे लोट आनेकी भलामन दी थी उनको मिलाप करवानेकी कदाचित् वाचकवर्ग चाहना रख्खे; लेकिन इस वंदर पर पहुचनेवाले, वंदर पर पहुंचते ही ज्योतिमें ज्योति रुप हो जाते है, तो फिर पीछा लोटनेका कहां रहा? और सर्व सुखानंद सागररुप खुद वन जानेसें मुलाकातका सुख मिलानेकी दरकार उन्होंमें होनेका संभव ही कैसा ?

---

# रत्न दुसरा.

## धर्म मार्गमें धन व्यय करनेसें कमी नहीं होता हे.

इस भरत क्षेत्रकी अंदर 'लक्ष्मीपुर' नामक शहरमें 'लक्ष्मीविलास' नामक राजा राज्य करता था. उसी नगरमें जैन मार्गमें रक्त और महान् सत्यवंत 'लक्ष्मीधर' नामक शेठ रहता था. उसके कमलवदनी और कमललोचनी 'कमला' नामकी भार्या थी. एक दिन शेठने रात्रिके वख्त ख्वाबमें उज्वल वस्त्र और आभूषणवंत एक सुंदर स्त्रीकों देख ली. तब शेठने उसें पूछा कि–' हे भद्रे ! तूं कौन है ? ' स्त्रीने कहा–' अजी में तेरे गृहकी लक्ष्मी हुं ' शेठने फिर कहा–'भला, क्यौं आइ है ? ' स्त्रीने जवाब दिया–' में अब तेरे मकानमेंसे चली जाने वाली हुं; वास्ते तुझे खबर देनेके लिये आइ हुं. ' यह सुनतेंही शेठने उसकों लात मार कर कहा कि–' जा, तेरे जब पीछे भी जाना है, तब अभी ही चली जा. ' अैसा कहनेसें लक्ष्मी और जगह चली गइ.

प्रातःकालमें शेठने ऊठ करकें मकानमें नजर की तो धन धान्य कपडे पशु वगैरः कुछ नजर न आया. तब शेठने शोचा कि ' वो विचारी रंक चली गइ तो क्या हुवा ? मेरा सत्य तो नहीं गया है. मेरे सत्य और सत्वद्वारा उद्यम करुंगा तो लक्ष्मी पुनः रंक बनकर आजीजी करती हुइ चली आयगी कहा है किः–

सतिया सत नव छोडियो, सत छोडे पत जाय;
सतकी बांधी लच्छमी, फेर मिलेगी आय !

ऐसा शोच कर अपने पडोसीके पाससें कुछ द्रव्य अंग उधार लेकर उस धनसें तेल निमक वगैरः खरीद करकें उसकों थेलेमें भरकर शहरकी गली गलीमें वेचनेके वास्ते भटकने लगा. उसमें किसी कों तोलमें कमती देना नहीं, अच्छी चीजमें हलकी चीज मिलाकर देनी नहीं, जूँठा भाव कहना नहीं और किसी तरहका दगा प्रपंच करना नहीं, इस मुजब साफ दानतसें क्रय विक्रय करनेसें पडोसीका द्रव्य जो कुछ लिया था उसें वापिस दे दिया, और घरपर आकर देव गुरुकी भक्ति करकें कुछ पुन्यमार्गमे भी खर्च डाला. ऐसें हमेशां करता हुवा—यानि जो कुछ नफा मिलता था उसमेंसें अपना गुजारा चलाता था; मगर ज्यादे नफा हाथ न आया; तब आस पासके गामोंमें फिरकर अपना माल वेचना शुरु किया और अपनी तंग हालत कों खतम करने लगा.

अब जो लक्ष्मी चली गइ थी वो एक मख्खीचुस मनहूसके घर पहुंची; क्यों कि वैसे बखील के मकानमें वो सुख मानती है—सबब कि वैसे कृपण उनका अच्छी तरह संरक्षण करते है—समाल कर रखते है. (न खाते पीते या खर्चते हैं.) मगर उन कंजुसने तो लक्ष्मीकों गहेरा खड्डा खोदकर उसीकी अंदर गाड दी, उससे लक्ष्मी कठिन कष्ट भुक्तने लगी. विचारी उद्वेग पा कर शोचने लगी कि—' अहा मैंनें अयुक्त किया ! जिस सबबके लिये मैंने उस महानुभावका त्याग किया वो सबब तो कुछ पार न पडा; लेकिन उलटा दुःख भुक्तना पडता है. वास्ते अब फिर उसीके घर चली जाउं; मगर वो मुझकों घरमें घुसने न देगा, वास्ते कुछ तदबीर लगाकर उसें पेस्तर ही प्रसन्न कर दुं और पीछे उसके मकानमें दाखिल हो जाउं.'

एक दिन लक्ष्मीधर शेठ गाँवडेसें पीछा लौटकर किसी बडके दरख्तके नीचे विश्रामके लिये बैठा था. वहां लक्ष्मी अपने हाथमें

एक कलश लेकर हाजिर हुइ, उसें देखकर शेठने शोचा कि-' यह कोइ परस्त्री है वास्ते यहांसे दुर हठ जाना ही दुरस्त हैं; ऐसा शोच दूर जा वैठा. दुसरे दिन भी लक्ष्मी उसी मुजब तदवीर और तजवीज के साथ हजुरीमें हाजिर हो शेठसें कुछ कहने लगी; मगर शेठने कुछ जवाव न दिया और चलतेही होगये. तीसरे रोज लक्ष्मी शेठके दोनुं पेरोंके बीच लिपट गइ, तब शेठने कहा के: 'तुं कौन है?' वो बोली-' मै तुमारे गृहकी लक्ष्मी हुं. अब मै तुमारे घर आऊंगी.' शेठने कहा-' तेरे विगर मैंने तो निभाव कर लिया, तुझे नमस्कार हे! तेरेमें क्या ढंग है? तूं पंडित, समझदार या सत्यवंतका मकान छोड कर निरक्षर (मूर्ख) या असत्यवंतका मकान पेस्तरही पसंद करती है, और अंध हो कर उत्तम कुलकों छोड नीच कुलमें भटकती है. फिर तू खुद चंचल है, जिसकों तेने सुख दिया उसीको फिर दुःख देनेमें भी कुछ कमीना नहीं रखती है. ऐसी तुं निर्दय, निफट और वेढंगदार है, तो तेरी सोवत कौन करैगा? मेरे पाँव छोड कर दूर हठ जा.' लक्ष्मीने कहा-' आप बडे हो, वास्ते मेरी प्रार्थना-अर्ज भंग करनी लायक नहीं है. मैं दूसरी जगह चली गइ सो मेरी कसूर है, वो तकसीर माफ कर मेरे पर प्रसन्न हो मुझे आपके मकानमें दाखिल होनेकी हां कहो.' ऐसी वहुतकी आजीजी और आग्रह किया, तब शेठने कहा-' यदि तुझकों मेरे मकानपर आनेकी मरजी होवै, तो जब तुझे मेरा मकान छोडकर चला जानेका इरादा हो आवै, तब एक वर्षके पेस्तर मुझकों खबर-इत्तला दे देनी. ये शरत कबुल होवै तो मै तुझकों मेरे मकानमें दाखिल होने दुं.' लक्ष्मीने वो शरत कबूल की. पीछे शेठ अपने घर पर चले आये और घरमें नजर फिराइ तो जगह जगह धनके ढेर लगे हुवे है. उस द्रव्यसें करके धान्य वस्त्राभूषन और सर सामान वगैर मन पसंद लाकर यथेच्छा मुजब लक्ष्मीका

उपयोग करने लगे, और दीन–अनाथ–कंगालोंको दान देने लगे. इस तरह लक्ष्मीका सदुपयोग करते हुवे कितनेक दिन चले गये.

एक रोज रातके वख्त लक्ष्मीने आकर शेठसें कहा कि–' तुमको छोडकर एक सालके बाद मैं और ठौर चली जाउंगी. ' यह समाचार पानेही फजरमें उठकर शेठने साधु साध्वीजीको वस्त्र पात्र देनेका शुरु किया, सिद्धांत लिखवाकर देने लगा, पुस्तकोंके भंडार कराने लगा, जैनशालाऐं स्थापने लगा, धार्मिक अखबार और पुस्तकें बनाने वालोंको बहोत कुच्छ साहाय दी, बहुतसें जीवोंको अभयदान दिलाने-लगा, कुटुंब, मित्र, कैदीजन–दीन–मुस्कीन–दुःखीजनोंका उद्धार किया और इस तरह सब धन मालका सदुपयोग करके पीछे एक लंगोट लगाकर तृणका संथाराकर शेठ सो गया! पीछे लक्ष्मी आ करके रोती हुइ कहने लगी कि–' अय शेठ! तुमने देवगुरु धर्मके कार्यमें मेरा व्यय करके मुझको ठग ली, तो अब में नंगी भइ हुइ कहां चली जाउं? दासी–बांदीकी तरह तेरेही मकानमें रहुंगी. ' शेठने कहा–' जैसा तुझको अच्छा लगै वैसा कर, ज्यादा क्या कहुं? ' बाद लक्ष्मी शेठके मकानमें पहिलेहीकी मुजब विस्तारवंत हो रही. उसके बाद लक्ष्मीधर शेठ देव गूरु और धर्मकार्यकी अंदर बहुत मुद्दत तक लक्ष्मीका व्यय कर आयुस्य क्षय होनेसे देवलोकमें जा पहुंचा और क्रमसें मोक्षमें भी जायगा. तथा शाश्वत सुख पाकर सुखी होगा. वास्ते कहनेका मुतलब यही है कि–धर्मसेंही शास्वत सुख प्राप्त होते हैं.

लक्ष्मी किनकी ना हुइ, ना होगी कोइ दिन;
धर्म मार्गमें व्यय किया, सोही नियम तुझ धन्य.
कोटीश्वर गये छोडकर, कोडी न आइ साथ;
देगा सोही संग जायगा, मिथ्या और है बात.

# रत्न तीसरा.

## सबसे सुज्ञ कौन और बडेमें बडा मूर्ख कौन?

(१)

एक वख्त मुल्कमशहूर ग्रीक तत्त्वज्ञानी सोक्रेटीसका कोइ चिरिफन नामका शिष्य–सागीर्द सूर्यदेवके मंदिरमें गया और विद्वाने होने पर भी बहुत नम्र और गुणवंत अपने गुरुसें ज्यादे कोइ दूसरा शख्स इस आलम में बुद्धिमान्–अकलमंद होगा या नहीं अैसा स्वाल उस मंदिरकी पूजारनकों जाकर करने लगा. पूजारनने कहा–" कोइ नहीं है."

अब जैसें अपने मुल्कमें कितनेक मजहबके लोग कोइ कोइ जरुरी बाबतमें निकाल करनेके वास्ते देवमूर्तिके अगाडी–रुबरु चीठीयें डालते हैं, वैसें अगाडी के ग्रीक लोक हरकोइ बाबतके निराकरण के वास्तें–हरकोइ सलाहके वास्ते और कोइ भविष्य निगाहमें लेनेके वास्ते सूर्यदेवके मंदिरकी पूजारनके रुबरु जातेथे. वो पूजारनकी पदवी हमेशां कोइ जइफ और बहुत अनुभव वाली औरतकों ही मिलतीथी, जिससे वो अनुभव और अनुमानका मिश्रण करकें जो कुछ योग्य जवाब देती वो बहुत करकें सच्चाही निकलता था.

जब उपरका जवाब सोक्रेटीसकों आप खुदके कानपर जा पहुंचा, तब वो गहरे शोचमें गिरफतार हो गया. दूसरा कोइ इन्सान तो अपने लिये अैसा मत–फैसला सुनकर मगरुरीमें आजावे, मगर अकलमंद विचारशील सोक्रेटीसने वैसा न करतें बहुत नम्रसें उन जवाबकी सच्चाइका आजमायश करनेका निश्चय–मुकरीर कर लिया.

ये आजमायशके वास्ते उसने अव्वलमें राज्यद्वारी पुरुषोंकी सुज्ञताकी कसोटी करली, उसमें फक्त स्वार्थ–पक्षपात–द्वेष और उद्धताइ या 'मैं ही सुज्ञ हुं' अैसा ममत्त्व देखा. बाद उसने शायर

विद्वान–और उपदेशकोंकी कसोटी की, तो उन्होंमें ज्ञानसें मगरुरी ज्यादे नजर आइ, और उन्होंका कुल शाहानपन दुसरोंकी बदी करनेमेंही समाया हुवा देखा. बाद कारीगर लोगोंकी कसोटी की, तो मालुम हुवा कि एक हुनर जानता होवै तो भी अनेकमें काबेलियत–हुंशीआरी रखनेकी गरुरी रखनेमेंही उन्होंकी चालाकीका समावेश होता था.

अब उसने आपके संबंधमें विचार करनेमें और उन सभीके साथ अपना मुकावला करने में दिल लगाया. सोक्रेटीसको गहरा शोच कर लिये बाद यह मालुम हुवा कि–" जिन चीजकी उन्होंको वस्तुतः समझ नहीं उसकी मुझको भी खबर–समझ नहीं; परंतु उन्हीके और मेरी बीच तफावत इतनाही मालुम हो आता है कि–मैं मेरी अज्ञानता प्रत्यक्षतासें देखता और कबुल करता हुं और उनमेंसें बहुतसें जन अपनी अज्ञानता नही जानते है और जो थोडेसे लोग जानते है तो वै उसका इनकार करते हैं. "

ये उत्तम तत्त्व उसके हाथ लग गया, इससें अैसाही मान लो कि तत्त्वज्ञान कूपका अंतका हिस्सा उनने ढुंढ निकाला! अपनी अज्ञानता जान लेनी ये कुछ जैसी तैसी बात या लडकोंका तमाशा नहीं है. और जानते हुवे पर भी वो अपनी अज्ञानता जाहिर में कबूल करनी सो तो फिर बहुत मुश्किलता भरी हुइ बात है. ये शक्ति गहरे दक्षपने वालेकोंही होती है. यदि हरएक इन्सान अपने आपकी अज्ञानता और भूल–कसूर जान लेवे और कबूल कर लेवें, तो जहान भरमें टंटा फिसादही न होने पावें, कचहरीयें और इन्साफी अमलदारोंकी दरकार भी न रहवे, वकीलोंके घर भरनेकी भी जरुरत न रहवे और सब कोइ सुखशांति और आनंदमें मशगुल हो जीवन पूरा कर लेवें और शुद्ध वृत्तिके लियेसें शुभ गतिके अधिकारी बन जाँय.

जो लोग थोडासा ज्ञान होनेपर भी भारी ज्ञानका शान, शौकत–घमंड दिखलाते हैं, थोडीसी सत्ता–हुकमत होनेपर भी अज्ञान लोगोंको डराने के वास्ते–धमकाने के वास्ते और फुसला-कर खाजाने के वास्ते, थोडीसी नीति और थोडीसी क्रिया होने-परभी महापुरुप–गुणका खजाना कहलाने के, वास्ते दावा करते हैं, वे सचमुच जहानको ठगते हैं. उन हरएक के ठग लेने के रस्ते अलग अलग हैं उतनाही तफावत है, बाकी वो सभी ठगाइही कही जाती है उसमें कुछ भी शक नहीं. उन ठगाइयें अंदरकी कितनीक ठगाइ जहान के रहीश इन्सानोंको दौलत, जमीन या आदम जातको भी नुकशानी–जफा पहुंचाती हैं, और कितनीक ठगाइ उन्ही के आ-त्माकोंही नुकशानी पहुंचाती है.

ऐसी झूंठे दंभी लोग दूसरोंको ठगते हैं, उतनाही नहीं मगर वे अपने आपकोंही ठगते हैं ये ज्यादे अफशोस पैदा करनेवाली विना है. दंभकी आदतवाले अपनी आत्माको भी नहीं पिछान सकते हैं और उससे भवरुप जंगलमें भटके ही रहते हैं. जो बलिष्ठ, ज्ञानवंत, श्रीमंत या हुकुमतवाले होते हैं, वे सभी सोक्रेटीसकी मुवाफिक् हमेशां नम्र और अपनी वडाइको धिःकारनेवाले होते हैं. गहरी और लंबी पुख्ता नदी हमेशां शांत रीतिसें वहन करती है, वहुत आवाज–गडवड मचाती है वो छोटीसी नदी ही हैं.

***

"वडेमें वडा मूर्ख कौन ?" ये तुमको जानना होवै तो दूर न ढुंढते तुमारे वदनमें ही तालाश कर लो! तुमने ऐसी कोइ जबर-दस्त मूर्खता–वेवकूफाइ की है? अगर अभी कुछ मूर्खता करते हो? शोच लो, नहि तो नीचेके लतीफे परसें समझ लेनाः—

असलके वख्तमें जब खानदान लोगोंमें दिल खुश करनेके वास्ते एक दो वेवकूफ (Fool मश्करा) रखनेका रिवाज चलता था. उस

वख्तमें एक अमीरने अपने घरपर असा एक मूर्ख रख लेनेकी वख्त उनकों लकडी पकडाकर कहा कि:—"तेरेसें कोइ ज्यादे मूर्ख मिले वहांतक तूं ये लकडी तेरी पास रखना और पीछे उनकों सुपरद कर देना."

थोडेसे वर्ष वींते गये बाद वो अमीर मरनके बिछोंने पर पडा, तब वो अहंबक उनके पास आकर खडा हुवा. अमीरने उसें पूंछा कि—"मैं अब थोडेही वख्तमें तुझसे हमेशां के लिये अलग होनेके वास्ते रुखसद हो जाउंगा."

मूर्ख बोला—" तुम कहां रुखसद होवोगें ?"

अमीरने कहा—" परलोककी सफर करनेको."

मूर्ख पूँछने लगा—"पीछे कब—चंदमुदतमें यहां पर आ पहुंचोगे?"

अमीरने कहा—" नहीं, नहीं."

मूर्ख बोला—" एक साल पीछे ?"

अमीरने कहा—" नहीं."

मूर्खने पूछा—" जब क्या बहुत मुदत पीछे आओगे ?"

अमीरने कहा—" हरगीज् न आउंगा."

मूर्ख बोला—" तब तो खोराक वगैरःका भारी बंदोबस्त किया गया होगा ?"

अमीरने कहा—" अहंबक ! वहां फिर खोराक वगैरःका बंदोबस्त कैसा ?"

मूर्ख बोला—" क्या तब तुमने खोराक वगैरःका बंदोबस्त नहीं किया ? तुम यहां सें रुखसद होते हो और फिर पीछे आनेवालेही नहीं हो, तोभी खोराक वगैरः सफरका सामान साथ नहीं लेते, वास्ते मेरेसें तुम ज्यादे मूर्ख हो. मैं असी बडी बेवकूफीका गुन्हागार नहीं हुं !"

ये रमुजी लतीफा अकलमंद इन्सानकों तो कलेजेके आरपार भेदकर नशीहत देता है; सबबकि वो शौचते है कि–" ऐसा कीमतदार मनुष्य जन्म मैने निकमा ही गुमादिया और परलोकके वास्तें भथ्था–खोराकी भी तैयार न की तो मेरा क्या हाल होवेंगे ?"

शास्त्रमें कहा है कि:–

चिन्ता रत्नं विकरति कराद्वायसोड्डायनार्थम् ।
यो दुःप्राप्यं गमयति मुधा मर्त्यजन्म प्रमत्तः ॥

वडी मुशीवतसें मिला हुवा ये मनुष्य जन्म जो प्रमादमें गुमाता है वो सुन्नेके थालमें फस भरता है, अमृतसें पाँव धोता है, उमदा हाथीपर लकडका बोजा लादताहै और चिंतामणी रत्न कव्वेकों उडानेके लिये फेंकता है !

ये उत्तम मनुष्य जन्म, आर्य देशमें जन्म, तन्दुरुस्त शरीर, जैन धर्म, सत्युपदेश वगैरः सब साधन फिर फिर कर मिलने मुश्किल हैं; वास्ते उनका सदुपयोग फक्त धर्मसेंही होता है; सवब कि:—

त्रिवर्ग संसाधनमंतरेण,
पशोरिवायुर्विफलं नरस्य;
तत्रापि धर्मं प्रवरं वदंति,
न तं विना यद् भवतोऽर्थ कामौ.

धर्म अर्थ और काम ये तीनके सिवाय मनुष्यका आयुष्य पशुकी तरह निष्फल है, उसमें भी धर्मकों श्रेष्ट कहते है; सवब कि धर्म बिगर अर्थ, और कामकी प्राप्ति नहीं होती–कहाहै कि:–

न धम्म कज्जा परमत्थिकज्जं,
न प्राणिहिंसा परमं अकज्जं;
न पेमरागा परमत्थि बंधो,
न बोहिलाभा परमत्थि लाभो.

धर्म कार्यसें दूसरा कुछ उत्कृष्ट नहीं, जीवहिंसासें दूसरा कुछ अकार्य नहीं. प्रेम रागसें दूसरा कोइ वडा बंधन नहीं, सम्यक्त्व-प्राप्तिके शिवाय दुसरा कोइ वडा लाभ नहीं.

अच्छा राज्य और सुंदर नगर मिलता है; मगर सर्वज्ञजीने प्रकाशित किया हुवा शुद्ध धर्म मिलना वडा मुश्किल है; वास्ते संसारकी खटपटमें सब वक्त न गुमाते-

शृंगी यथा क्षारजले पयोनिधौ,
वसन्नपि स्वादुजलं पिबेत्सदा;
तथैव जैनामृतवाणी मादरात्,
भजेद्गृही संसृति मध्यगोऽपि सन्.

जैसें शींगवाला मत्स्य खारे जलके समुद्र में रहता है; तो भी हमेशां नदीका मीठा जलही पीता है, तैसें गृहस्थको संसारके बीच रहकरके भी आदर सहित जिनजीकी अमृतरूप वानीका सेवन-पान करना चाहिये.

मतलब कि जैसें नटुवा पतली रस्सीके ऊपर अद्धर नाच खेल करता है और मुँहसें ' अच्छा अच्छा ' करता है; मगर उनका चित्त तो रस्सीमें ही रहता है, उस तरह संसारमें कामकाज करते पर भी अंतरमें धर्म तर्फ-जिनजीकी अमृतरूपी वानी तर्फही दृष्टि रखनी और उनके उपदेशसें विरुद्ध न चलना ऐसा करनेसें संसारमें भी सुख मिलता है और परलोकके वास्ते उत्तम भथ्था-खोराकी तैयार होता है. शास्त्रमें कहा है कि:-

" धर्मोऽयं धनवल्लभेषु धनदः कामार्थिनां कामदः ।
सौभाग्यार्थिषु तत्प्रदः किमपरः पुत्रार्थिनां पुत्रदः ॥
राज्यार्थिष्वपि राज्यदः किमथवा नाना विकल्पैर्नृणाम् ।
तत् किम् यन्न ददाति वांछितं फलं स्वर्गापवर्गावधिः ॥

ये धर्म धनकी दरकार वालेकों धन, कामार्थिकों काम, सौभाग्यार्थिकों सौभाग्य, पुत्रार्थिकों पुत्र, राज्यार्थिकों राज्य और जो जो मनुष्यको जिसजिस चीजकी यानि नानाविधकी इच्छा होवे वो सब देता है! स्वर्ग और मोक्ष तकका भी सुख देता है! क्या नहीं देता? यानि सब कछु देता है.

---

# रत्न चौथा.

## श्री पंच समवाय.

---

"कालो महा नियइ, पुव्वकयं पुरिष कारणे पंच, समवाये संमत्तं, खेडंते होइ मिच्छत्तं."

---

हरएक वस्तुका नतीजा पांच बाबतों के ऊपर आधार रखता है. कुल्ले बनाव उन पांचोंकों अनुसर के ही बनते हैं. हिंदुभाइ जास्ति हिस्से कर्मकों ही महत्त्व देते हैं. और ईंग्रेज लोग सीर्फ उद्यमकों ही कबूल करते हैं; लेकिन गहेरा विचार करके जैनोने ही सच्च तत्त्व तो ढुंढ नीकाला है. जैनधर्म ऐसा कबूल रखता है कि पांच सबब–जिनकों शास्त्रकार पंच समवाय–पंच समुच्चय कहते हैं उनकों अनुसर के ही कुल्ले कार्य होते है. इन मानीनताकी सबुती निम्न लिखित दृष्टांतोंसें होती है.

(१) औरते लायक मोके पर ही हमल इख्तियार करती हैं. और लायक वक्तपर उनकों जन्म देती हैं ऋतु–मोसम वक्तपर ही आती जाती हैं. विगैरः कालका ही महात्म्य है.

(२) कितनीक खाविंदवाली औरतें जुवानीमें भी गर्भवंती नहीं होती हैं. हथेलीमें किसी शख्शकों बाल नही पैदा नहीं होते

हैं. आमके दरख्तपर जाम नहीं आ सकते हैं. औरतोंकों मुंछ नहीं उगती है. इत्यादि इन हरएकका मिजाज (स्वभाव) ही वैसा है वो बताते हैं.

(३) एक कोकिला के उपर बाज तलप-टांप रहा है और एक शिकारी उस कोकिलका शिकार करने के लिये कमानपर तीर-बान चडाकर खडा रहा है. दो काल के मुंहमे फँसी हुइ कोकिला बच जाय ऐसी किसीकों भी प्रतीति हो सके या भरोंसा रख शके वैसा है ही नहीं; तो भी उसके जीनेका निर्माण होने के सबबसें शिकारीकों सांप काटता है उससें वो जमीनपर गिरजाने के लिये बान टेढा चला जाता है और वो बान कोकिलाकों पकडने पर तैयार रहे हुवे बाजकों जाकर लगा उस्सें मर गया और नीचे गिरा ये निमत या निर्माण-भवितव्यताका प्रभाव है.

(४) खुराक ढूंढनेकों निकल पडा हुवा एक चुआ करंडमें कुछ मिठाइ वगैरः होगा ऐसा समजकर खुश हो उसकों काटकर अंदर घुस गया, तो उसके अंदर कितनेक रोजसें भूखा सांप बैठा हुवा था उनका, छेद होनेसें बहार नीकलना-और चुएका अंदर घुसना होनेसें एक दूसरे खुराककी आशासें आतुर बने हुवेका काम पुरा हो गया, यानि सांप उसकों खा गया उस्सें सांपका काम हो गया और चुएका काम निकल गया! विगर चिंतन किये ही अकस्मात् भूख मिट गइ और भाग जानेका मार्ग मिला; अब सांप किस सबबसें वहां बैठा रहे? वो जंगलमें सटक गया. देखीये, ए कर्मकी रचना है!

(५) तिलमें तेल रहा है; तथापि उद्यम किये बिगून मुराद हांसिल नहीं होती है यानि तेल हाथ नही आ सक्ता है. एकेंद्रिय वेल-लता वो भी उद्यमसें ही उंचे चड सकती है. बहुतसी हिंसाए

करके नर्काधिकारी बने हुवे सत्कार्योंसें उद्यमके जरियेसें छ मही-नेमें अरिहंत पद पाते हैं.

इस मुजब काल, स्वभाव, नियत, कर्म और उद्यम ये पांचों बावतें ( Circumstances ) अनुकूल या प्रतिकूल हो उस मुजब हरएक बनाव और हरएक नतीजा बना करता है. इस परसें समझनेका यही है कि कुल्ले इन्सानोंकों सत्कार्योंमें प्रवृत्ति तो करनी ही चाहिये. उद्यम विदून धर्म करणी ही नही होती और उस विगर मोक्ष भी नही हांसिल होता; परंतु उद्यम करने पर भी इच्छित नतीजा न आवे तो समझना कि जिस तरह औरत नौ महीने करीब पूरे होनेकों सिवाय वच्चेकों जन्म नहीं दे सकती उसी वजह इस कार्यका फल उनकी मुदत पूरी हुवे पेस्तर नहीं मिल सकता है. अगर जैसें हथेलीमें वाल न ऊग सकता है ऐसी कुदरत—ऐसा उनका स्वभाव है, वैसें इस कामका फल मेरे समझने मुजब नही मिल सके—ऐसा कुदरती नियम होगा. अगर दो तरहसें भोग हो पडी हुइ कोकिला वच गइ और शिकारी तथा वाज शिकार करनेकों तैयार होने परभी उन खुदकाही शिकार हुवा वैसा नियत था; तैसें मुझकों भी ऐसा विचारने पर भी ऐसा नियत होगा, अगर जैसें उद्यम करनेवाले चुएकों उसके कर्मनें यानि पूर्व भवके कर्मों—कृत्योंके परिणामनें उलटे रस्ते उद्यम करवा करकें सांपके मुंहमें फंसा दिया और कैद पडा हुवा सांप भूखा प्यासा निराश—नामुराद बनकर मरनेकी तैयारी पर पहुंचा हुवा उसके कर्मनें भूख प्यास दूर होनेका और भाग जानेका रस्ता कर दिया, वैसे ही मेरे पुर्व कृत्योंके विपाक रुप कर्मने मुझे विपरीत फल हांसिल करवानेके लिये ये उद्यम करवाया होगा. पूर्व भवमें पापके वदलेमें पुण्य किया होता तो यही मेरा कर्म अभी मेरे लाभमें उतर आता ऐसा सोचकर मनमें होता हुवा क्लेष अटका देना. ये चारों तर-

इके प्रतिकूल योग दूर करनेके वास्ते पुण्य करणीकी जरुरत है, और वो तो उद्यम पर आधार रखती है. वास्ते अकलमंद मनुष्यको लाजिम है कि उद्यम–महेनतको सभी सुखका कारण–सबब गिनकर प्रतिकूल योगसे न गभडाते हिंमत रखनी चाहियें और सत्कर्मोकी अंदर परिणाम–नतीजेकी दरकार रख्खे बिदून काम करनेही रहना चाहियें.

---

# रत्न पांचवा.

## उद्यम महात्म्य.

(१)

आजही मर जाना है असा समझ करके देव गुरु धर्मकी भक्ति कर लो, और हमेशां जींदा ही रहना है असा समझ करके अच्छे कामोंकी काररवाइ किया करो.

(२)

कूदरतने तुमको इनायत की हुइ शक्तियोंके जरियेसें तोफेमें तोफा–खुबतर जो काम तुमसें बन सके वैसे कामोंमें तुमारी जींदगीका कुछे वक्त खर्च डालो, कि जिस्सें करकें मरनेके वक्त पर तुमको दिलासा मिल सके कि–' मैंने मेरेसे बन सका उतना कर लिया है.'

(३)

काबिल इन्सान हमेशां दुश्मनसें खबरदार ही रहते हैं. कुछे दूश्मनोंसें भी बद खिसलत आदतोंसें बहुत जियादे खबरदार रहनेका है. और तमाम बदआदतोंकी अंदर सुस्ती–बेदीपन जियादे रंजीदा देने वाला है.

(४)

यैदीपन अगर कायरपन ये एक बोजा है, हरकत रुप है, फूस फास है, मनुष्यकों निकमे रोती सिकलके, फिक्रमंद और मोहताज बनाने वाले है.

(५)

आलस, शरीर और मनका झहर हैं, दुष्टताकी दाइ है, कुल्ले गुन्हाकी माता है, सेतानका सिराना है–उसीसा है. जन्मसें वारसामें मिली हुइ चंचलताकों खा जानेवाली जीवात है–मतलबमें वो इन्सान कों प्लेग हैझा अगर दोझख है–नर्क है.

(६)

इतना मै हिम्मतके साथ कहुंगा कि यैदी मनुष्य ( मर्द अगर औरत ) वो चाहे वैसे तवंगर–बक्त बुलद–बहुत सगे प्यारे वाले–रिद्धि सिद्धिसें भरे पुरे हो, तो भी कभी खुश मिजाजदार न हो सकेंगे–लेकिन हमेशां थके हुवे–रंजीदा बने हुवे–बीमारीओंसें गिरफतार भये हुवे–रोज रोज निश्वास डालते हुवे–फिक्रमंद–दुसरोंकी गलती गफलती निकालने–बतलाने वाले–हमेशां व्हेमी–शकमंद–दुनयां और उसकी अंदर रही हुइ चीजों पर गुस्सा करते हुवे उसको फना हुइ देखनेमें राजी अगर वैसा नहीं तो कोइ बेवकुफ तरंगसें आत्म हत्या करनेकों कटिबद्ध बने हुवे नजर आते हैं.

(७)

जींदगीको चक्कीके साथ मुकाबलेमें रख्खी जाती है–उसमें गिहूं डालोगे तो आटा होगा कि जिसकी मझहदार भाखरी–रोटी –पूडी वगैरः बनेगी; मगर गिहुं न डालोगे तो बेशक पत्थर ही पीसा जायगा !

(८)

सुस्ति हमेशां बहानेसें भरपुर होती है. यैदी मनुष्य कहेगा कि

-: इन रहामें तो बडा शेर है ! अगर तो ' वो काम पुरा होनाही मुश्कील हैं, किंवा ' मैंने कोशीश कर देखी अब कोशीश करनेकी कुच्छ जरूरत नहीं ' अपनी शक्ति आत्मा फैला देवे तो ऐसी एक भी चीज नहीं है कि वो न कर सकै; वोही आत्मा परमात्मा भी हो सकता है; ऐसा उनके दिलमें कायम हो गया हो तो ऐसे बहाने निकाल कर सुस्त-डरपोक बन बैठ रहवे ही नहीं.

(९)

आलसु मनुष्यके नसीबमें अखीर ऐसा कहनेका रहता है कि-' भूतकालने मुझे ठग लिया है, वर्तमान काल पीडता है, और भविष्य काल भयभीत करता हैं. ' !

( १० )

काम यही जींदगी है; वास्ते मुझको कह दो कि तुम क्या काम कर सकोगे. जब मैं कह दुंगा कि तुम कैसे हो ? यानि तुमारे कामकी कारवाइकी-फरती-ताकत परसें पहेचान लुंगा कि तुम इस कदरके हो.

( ११ )

बदहाजमायत-दीवानापन वगैरः मर्ज, अगर बुरे विचार, बुरी मनसा, छोटी छोटी फिक्र-रंज और उदासीनता ये सबकी बिगर दामकी दवाइ चाहिये तो डाक्टरोंके पास न जाते ' अखंड उद्यम ' यही अवल दर्जेकी दवाइका उनोंके वास्ते आजमायश कर देखो. हरएक पलको उपयोगी कामोंसे मामूर करो. इन दवाइके तुमको दाम न लगेंगे, मगर दाम हांसिल होवेंगे, और मर्ज दफे हो जायगा.

[ १२ ]

जैसें रात बिदून दिनकी हयाती नहीं है, वैसे उद्यम बिगर फुरसद या आरामदारीकी हयाती नहीं है.

( १३ )

बहुत दफे इन्सान जानते है कि–पांच दश हजार रुपै अच्छे या बुरे मार्गसे हाथ करलेके एकांत निवासमें पडे रहना उससें दु-दुनियां की जालसाजा, फिक्र और रंजदासें अलग हुवा जाय. ये प्रयोग बहुतसें मनुष्योंने–बहुतसें मनमौजी–तरंगीओंने और आ-लिमोंने एकसे अनेक वेर आजमा लिया है और सबका नतीजा एकसाही आया है. वो यही के निराशा! बराबर समझलो कि महे-नत और दर्द–तकलीफ इन्सान जात अपने नसीबमें लिखवाकर आया है. जो लोग उससें इसी तरहसें भागजाना सोचते हैं उनके पिछाडी वे दोनु बडे जोरसें हुमला करते हैं.

[ १४ ]

वर्षोकी लंबाइ वो कुच्छ जींदगीकी लंबाइ नही गीनी जाती है. मनुष्यकी जींदगी, दिन–महीने और सालोंसें नापी नहीं जाती, म-गर किये हुवे सुकृत्य–नेक काम और सुविचारोंसेंही नापी जाती है.

(१५)

चीनका एक बादशाह कहता था कि–जो कोइ मनुष्य अेसा होवे कि जो काम न करें अगर कोइ एक औरत अेसी होवे कि जो आलसु हो पडी रहे तो शहेनशाहीमें कोइ न कोइ एक इन्सानको भुख तरस और तापका रंजीदा उठानाही पडेगा.

(१६)

भगवान श्री महावीर स्वामीजीने कर्मकी वकीलात करनेवाले सद्दाल पुत्रको धर्मक्रियाके लिये उद्यमवंत होनेका बोध किया था. मनुष्यको " कर्म मुजब उद्यमवंत होनेका सूझता है. " और " कर्म-का शिल्पकार मनुष्य है. "

(५७)

उद्यम यो सीर्फ दौलत माल या इज्जत वगैरः प्राप्त करनेका ही साधन है ऐसा नहीं है, मगर बुद्धि, अनुभव, धर्म और आत्मज्ञान, विवेक, कामकी पद्धति, सहनशीलता वगैरः और वक्तका सदुपयोग करनेकी और वक्त बचानेकी बुद्धि देनेवाले भी वही–उद्यम ही है.

(५८)

जो लोग ऐसा कहते हैं कि उद्यम फक्त गुजरानके लिये ही है, वे लोग बडी भूल करते हैं. गुजरानके साधन मनुष्यके पास बहुत-से हो; तो भी दुनियामें निभाव करनेके वास्ते और दुनियाको निभानेके वास्ते हरएक मनुष्यको उद्यम करनेकी जरूरत है. काम है सो ढालकी मिसाल है. उसको करनेके वक्त दीवानी–वाहियात जल्पना–कल्पना–तरंग–निंदखोरी वगैरः को दाब देने पडते हैं. बारीकमें बारीक निर्जीव बातों पर भी निगाह देनी पडती है. हाजिर जबाबी होनेकी और गहरा विचार करनेकी जरूरत पडती है. मौके पर जबानको कब्जेमें रखनेकी भी फर्ज पडती है. जो सब गुन मनुष्य पनको नामीसदार बनाने वाले और ऊंचे दर्जे पर पहुचाने वाले हैं वास्ते उद्यम अगर कामको मनुष्यका श्रेष्ठ शिक्षक या गुरु कहा है–मतलब उद्यमके जरियेमेंही कुछ इल्म और गुन हांसिल होते हैं.

(५९)

फलकी दरकार रखनी और फल हांसिल करनेकी महेनतसें बच जानेके वास्ते कोशीश करनी सो हरामी पनेका लक्षण है.

(६०)

एक धंदेमें काबिल हुवा मनुष्य दूसरे कोइ भी धंदेमें फतेह-मंदी हांसिल करनेमें ताकतदार होता है.

(२१)

बदनका सुख दिलपर आधार रखता है, मन-दिलका सुख ज्ञान और अनुभव पर आधार रखता है. ज्ञान और खास करकें अनुभव तो तकलीफ् और खंतसेंही हांसिल होते हैं. दौलतसें भी तकलीफ् और खते जियादे कीमतदार गिनने लायक है.

(२२)

हीजडे लोग खत्तोंसें खोफ खाते हैं. नीच मनके लोग कोनेमें वैठ कर गुड खानेका पसंद करते हैं; लेकिन सच्चे उद्यमी इन्सान तो खत्ते, अनुभव और दुसरोंकों उपयोगी पडनेकी ताकतकी शोध मेंही-ढूंढनेमेंही फिरते हैं.

(२३)

जिसका खुन जुवानीकी मोसममें गरम नहीं होता है, जिसके बदनके अंग अभी उगने-खिलनेकी शुरुवातमें हैं तो भी उसकों दोडानेकों राजी नहीं है, जो जुवान मगजकों बुरे देखावों सें-बुरे विचारोंसे और बुरे शब्दोंसें नापाक (भ्रष्ट) करता है वो इन्सान जिंदा होनेपर भी मरा हुवा ही है.

(२४)

असमर्थ संसारियोंकों लग्न-सादी ये वडी भारी आफतका मूल है. " सुंदरी शोभे समर्थकों, दुजे दुखःका धाम. "

(२५)

'फरखुद नहीं' उसका माइना 'मरजी नहीं' अैसा मैं करता हुं; और 'मरजी नहीं' उसका माइना 'मोत मंगता हुं' अैसा एक आलिम करता है!

(२६)

" वच्चा पैदा होनेकी वक्तपर अपने आपसेंही न रोएगा, तो दुसरे चुकटी भर करकें भी रुलावेंगे. " इसी वजह जो लोग मर-

जीसें और खुशहालीसें सख्त महेनत न करेंगे, उनोंकों भूख और तंगी–मर्ज और फिक्र जुल्मसें भी गुलामगिरी करावेंगे.

(२७)

उद्योगी मनुष्य चाहे वैसे काममें मशगुल वने हुवे होवें तो भी फरसुद मिला सकते हैं. नेपोलियन बोनापार्ट सारे युरोपके संयुक्त लस्करकी सामने भयंकर लडाइयें लडते वक्त–युद्धके अधवीचमें ही और तोफके गोलोंके वीच अपनी मा और औरतकों दर छ छ घंटे बाद कागज लिखता था और एक अैसेही प्रसंगमें होने पर भी एक स्कुलके कानून तैयार कर डालेथे.

(२८)

हरएक शख्श आलिम होनेमें ताकत दार है. हरएक शख्श जबरदस्त वेपारी होनेमें लायक है. हरएक शख्श तत्त्वज्ञानी बनने कों शक्तिमान् है. भले कम अकलके जइफ लोग कहा करें कि–' इसमें कुच्छ माल नहीं. '

(२९)

विल्यम कोवेट खेडूतमेंसें पार्लामेन्टका मेम्बर हुवा वो बहुत ही सख्त और नियमसर महेनतके जरियसें ही हुवा था. इंग्लांडका प्रधान–वजीर ग्लाडस्टन जइफ होने परभी तन्दुरस्त और खुश मिजाजी था वो सीर्फ सख्तमें सख्त महेनतसें ही था. स्कॉट कवि शायरने लाइब्रेरी पर लाइब्रेरी भरी जावे उतने और वे भी उमदा पुस्तक बनाये है वो न थक जाय वैसे उद्यमसें ही. आरामके लाल्चु और ' घडीभर तो आराम लेने दो ' अैसा चिल्लानेवाले कभी कभी वडे मनुष्य नही बने हैं.

(३०)

इल्ममें या ताकतमें वडे मनुष्य बननेकी उमेद ही न रखनेवाले पर थुंकना चाहियें, यानि उनके मुंहपर थु है! जो लोग हर

हमेशा तुच्छ विचार रखते हैं वे कभी सखावतदार, विवेकी, इनसाफी और सखी-धर्मी नहीं बनसकते हैं. बडे न हो सके उसके पर अपना जोर जुल्म नहीं है, मगर बडे होनेकी उमेदही न रखनी वो नीचताका काम है-लक्षण है.

( ३१ )

अकेला पडाहुवा इन्सान शानशोकन विगरका-अव्यवस्थित -डरपोक-सुस्त-और विचार करनेमें अशक्त वन जाता है-ये वातका वहुत दफे आजमायश कर देखा है. ' उद्योगमय जींदगी ' और वातचीतके लिये ' लायक इनसानकी सोवत ' सें ही अपना सुधारा होता है. और चालाकी भी हांसिल होती है. इन दोनूके सिवाय मनुष्य शुन्यकार-सडे हुवे मगजका हो जाता है-उसकी इंद्रियें वहेरी हो जाती हैं.

[ ३२ ]

जो शख्श रातदिन विचार ही किये करता है वो सवसें दुःखी मनुष्य है. वहुत निर्वल-कम मगज शाकितका-वीर्यका गैर उपयोग करके वीर्यहीन वने हुवेकी अैसी प्रकृति-तासीर वंध जाती है कि कुच्छ भी काम न हो सके-कुच्छ योजना तैयार करनेकी न हो तो भी कुच्छ कुच्छ विचार किया करे; अखीरमें, कुच्छ नहि तों वद हजमीका वीमारीवाला जैसें आधी निंद पाता है और टूटे फूटे ख्वाव सेंकडों देखता है, उसी तरह वो इन्सान भी मकान-दौलत-कुटुंव-कवीले-दोस्त-मुल्क-जमीन-कुदरत और खुद आपके वारेमें अगर कुच्छ नही तो पास पडा हुवा फुलकी वावतमें भी टूटे फूटे विचारोंमें गोथे खाता है. अैसा मन-दिल एक घडीभर भी आरामदारी नहीं पाता है.

इस्सें उसका दिल वीमार हो जानेसें मनन-अवलोकन और तर्क करनेमें नाताकातदार वनता है. उस्की मोत भी भ्रमणामें ही

होती है, जिसमें सद्गति होनी मुश्कील है. ऐसे लोगोंके वास्ते नियमित और अखंड उद्योग नियमित और अच्छा खुराक—और नियमित भक्ति यही उत्तम खूबतर दवाइ है.

# रत्न ६ वाँ.

## धर्म ! धर्म ! ! ऐसा निकमा पुकार !

धर्म ! धर्म ! ! धर्म ! ! ! ऐसा पुकार अपन चारों औरसें सुनते हैं, मगर वो सब पुकार बहुत करकें पोला—खाली—निकमा ही है. धर्मकी दरकार करनेवाले बहुत कम हैं. और जिनकों दरकार है वे गुलशोर नहीं मचाते हैं. मांगता है उसें जरुर मिलता ही है; तो फिर पुकार करनेकी मतलब ही क्या ? कुदरतने अपने आपके सभी खजाने खुल्ले ही रख दिये हैं, जिनकों जिसकी जरुरत हो उसकों वो ही मिलता है. तुमने कभी कोइ ऐसा मनुष्य देखा है कि जिसने दम भरना चाहा होवै और उसें हवा न मिली हो ? उसी तरह धर्मकी जिसकों दरकार होवै उसें न मिले ऐसा होवै ही क्यों ? आजकल तो सबको धर्म के सिवाय दूसरा तमाम चाहिता है ! एक-करोडपतिने बंगला सुशोभित किया, अलग अलग टेबलों के उपर देश विदेशकी अजब चीजें रख दी, और किसी बातका कमीना न रख्खी; तो भी कोइ जापानीस अजब चीज रखनी चाहियें, ऐसा शोचकर चार आनेकी जापानकी डिबिया खरीद करकें टेबि-ल के उपर रख देता है. धर्म के संबंधमें भी वैसा ही है. सब तरह के शोख मिलाया तब जरासा धर्मका देखाव भी शोखकी खातिर चाहियें—ऐसा लोग मानते हैं. कितनेक ऐसा मानते है कि—

धर्मका जैरासा भी देखाव न रखेंगे तो लोग चर्चा-वातें करेंगे, यों समझ करके धर्म! धर्म!! ऐसा निकमा पुकार करते हैं, या तो वाह्य क्रियाओंमें सामिल हो कुछ लाभका हिस्स लेने लगते हैं.

एक युवान किसी महात्मा के पास गया और कहने लगा कि–'कृपानाथ! मुझे धर्म चहिता है?' महात्मा युवानकी तर्फ देख रहा; मगर कुछ बोला नहीं–लेकिन फक्त स्मित हास्य किया. वो युवान हररोज आने लगा और वो ही मंगनी करने लगा. आखिरमें उस युवानको उन महात्माने कहा कि–'चलो, आज अपन नदीमें स्नान करनेको जावें.' वाद दोनु चले. उस युवानने महात्मा के फरमान मुजब पानीमें गोथा लगाया कि महात्मा भी पानीमें कूद पडा और उस युवानकी गर्दन पकडकर दाव रक्खा. जब युवानने वहुत वख्त तक तडफडाट किया, तब उन्को छोड दिया. वहार निकले वाद महात्माने कहा–'तूं पानीमें था तब तुझे सबसें ज्यादे किस चीजकी जरुरत थी?' युवानने कहा–'दम लेनेकी.' महात्माने कहा–'तुझको इसी ही तरह धर्म चहिता है? ऐसा होवै तो एक मीनीटमें धर्म मिल सकै. पानीकी अंदर दम के लिये जितनी दरकार–जितनी तृषा थी उतनी ही दरकार और उतनी ही तृषा यदि धर्म के वास्ते न होवे तो धर्म कभी मिलनेवाला ही नहीं. वो न होवै वहां तक पुस्तक, बुद्धि और विधियें सभी निरर्थक हैं.'

शोचो कि एक कमरेमें एक चोर दाखिल हो गया है. उसको किसी तरहसें जाननेमें आ गया है कि इस कमरेकी पडोस के कमरेमें सुवे की पाटें पडी हुइ हैं. और ये दोनु कमरे के वीच एक नहीं जैसी दीवाल मात्र है. उस वख्त चोरकी स्थिति कैसी हो जायगी? उनका सब ध्यान सुवे की अंदर ही जायगा. उनसें निंद रिसाकर चली जायगी. खाना पीना भी उसें अच्छा मालूम न

होवेगा. दीवालमें किस तरह गुब्बा पाडदेना ? यानि किस रीतसें दीवाल फोडकर सुन्नेकी पाटें किस तदवीरसें उठाके चल धरना ? यही उसीके दिलमें धुमधाम मचा देगा.

इसी मुजब धर्मकी बाबतमें भी समझलेना. क्या तुम अैसा शोचते हो कि ये तमाम लोग अैसा समझते होवें कि-सुख-आनंद धर्म और ईश्वर यहां ही है, और अैसा जानते हुवे पर भी हमेशा की मुवाफिक दुनियांदारीके कामोंमें लगे ही रहे और ये सुख-आनंद-धर्म और ईश्वर मिलानेके लिये कोशिश न करे ?

दुसरे लोग चाहे वैसा मार्ग पकड लेवें; मगर जिनकों अैसा मालुम हुवा होवे कि यहां सुख और धर्म है, वो मनुष्य तो समझ लेगा कि-इंद्रियोंके सुख वो कुछ सुखकी गिनतीमें नहीं हैं. ये क्षणीक जड शरीरके सुख सो अमर आत्मिक सुखोंके आगे कुछ भी हिसाबमें नहीं. और अैसा समझनेहारा पीछे ये आत्मिक सुख मिलालेनेके पीछे ही लगा रहेगा, उस वास्ते वो दीवाना-बावरा हो जायगा. दीवानपन, ये वेगवंत जिज्ञासा यही धर्मका प्रारंभ है.

अैसी तन्मयता आये बाद धर्मकी गेहरी बातें जाननेमें प्रवेश होना कुछ मुश्किल नहीं. कैवल्यज्ञानी जो कुछ जानते है सो सब कुछ पुस्तकमें नहीं, और पुस्तकोंमें लिखा भी जा सके नहीं. तब वे किस तरह वो ज्ञान पा सके ? पुस्तक या गुरुओंके पाससें नहीं, लेकिन तन्मयताके प्रतापसेंही आप खुदने आत्ममथन करकें ये रत्न प्राप्त कर लिया.

आज कल जुदे जुदे धर्मके साधुओंमें उच्छृंखलता-अविवेक-ओछापन-ज्ञानका अभाव-तंगी और क्रियाशुन्यता वगैरः जो कुछ देखनेमें आता है उन सभीका मूल ‘ तन्मयताकी न्युनता ’ ही है. जहां तन्मयता नहीं वहां और दुसरा क्या होवे ? यानि कुछ नहीं होना है !

धर्मके नामसें होती हुइ मारामारीका मुल सवव की तालाश करेंगे तो भी 'तन्मयताकी न्यूनता' या 'धर्मके मूल तत्त्वोंमें अ-नजानपना' ही है. मुहपति, मूर्ति या पुस्तक किसीकों भी मोक्ष देने हारे नहीं हैं. ये पदार्थ कुछ धर्म नहीं हैं; ये मात्र धर्मकी योग्यता मिला लेनेके वास्ते सब सबने मान लिये हुवे साधन हैं. एक वख्त कितनेक लोग तकरार करतेथे और तकरार करनेमें आखिर एक दुसरे पर हाथका जोर आजमाने लग गये. एक कहने लगा कि:— 'शिव है सोही सच्चा है.' दुसरेने कहा—'विष्णु है सोही सच्चा है!' तीसरा वोला—'पाक अल्लाहके सिवाय दूसरे सव देव झूंठे हैं.' इत्तिफाकमें एक शांत पूरुष वहांपर आ पहुंचा और एक एकका हाथ पकडकर पूँछने लगा कि—'तूने शिवकों देखें हैं?' 'यार-बिरादर! विष्णुका रुप कैसा है?' 'मियां तुमने खुदा रसुल पाक परवर दिगार अल्लाहतालाकों कब देखेथे?' सब कोइ कुछ जवाब न दे सके. इससें अैसा मालुम हुआ कि—'तुमने सच्चे देवकों देखेही नहीं, तो काहेसें कह सकते होकि यही देव सच्चे और दुसरे सब झूंठे हैं?' सच मुच यदि वै सच्चे देवकों जानते होते तो देव की नामकी मारा मारी करतेही नहीं पूरा घडा छिलकाता नहीं! फक्त अधुरा होता है वही छिलक कर वकळाद शब्द करता हैं.

दुनियांका वडा हिस्सा अैसा धर्म पालनेवाला है. सचमुच धर्मकी दरकार करनेवाले तो कोइ विरल नर हैं, और वै धर्ममें श्रद्धा संपूर्ण होनेसें उसीकी खातिर कुल दौलत या वदन भी अ-र्पण करनेकों तैयार होते हैं.

# रत्न ७ वाँ.

## अपना लढाइका मैदान.

लढाइ ये शब्द पढते ही कितनेक वाचकजनके दिलमें कदाचित नाराजी हो आयगी; मगर सचमुच ऐसी नाराजी या रंज करनेवाले लोग "जैन" नहीं. 'जैन' शब्दकी व्याख्या ही वे नही जानते, इतनाही नहीं मगर वे कुदरतके कानून भी नहीं जानते. 'जैन' यह शब्द 'जी' यानि जीतलेना इसपरसे निकला है. जैन प्रजा यानि जीतनेवाली प्रजा; और क्या जीतलेना वो लढाइ विगर हो सकता है ? स्वार्थपरायण हो बैठे बैठे और उवासी खाते खाते क्या जय मिल सकेगा ? जहां जमीन है वहां हवा है, जहां अग्नि है वहां गरमी है, और जहां जय है वहां लढाइका मैदान भी होना ही चाहिये. जिनको एक मीनीटभर भी—एक क्षण भरभी लढाइ विगर रहना न चाहिये उसका लढाइका मैदान भी इतना विशाल चाहिये कि जिसमें विविध लढाइ चलती हो रहेवे.

कुदरतका भी कायदा है कि लढाइ विगर कुछ भी नही बन सकता है. अपनी जींदगी खुद ही प्रतिक्षण लढाइका परिणाम है. दृष्टांतरुप है कि-पृथिवीमें गुरुत्वाकर्षण नामकी शक्ति है सो पृथिपरकी हरएक चीजको आपकी तर्फ खींचे ही करती है. मनुष्य जागता होवे या निंद लेता होवे, जानता होवे या नहि; मगर वो गुरुत्वाकर्षण—कुदरतकी अदृश्य शक्ति उनको आपकी तर्फ हर पलपे खींचे ही करती है. गुरुत्वाकर्षणका स्वभाव देखतें तो अपना शिर जमीनदोस्त ही रहना चाहियें, ऐसा होने पर भी अपन वो शिर

उंचा रख सकते हैं, हाथ जमीनपर पडे हुवे होने चाहिये उसकों अपने अंदर रख सकते है ये किसका प्रताप? फक्त लढाइका! प्रतिक्षण अपना शारीरिक बल कुदरतके गुरुत्वाकर्षणके साथ लढाइ करता है और जितने दर्जे अपनेमें ताकत है उतने दर्जे जय मिलाता है. दूसरा दृष्टांत लेवें कि–अपन कमाते हैं और खाते हैं इसमें क्या लढाइ है? दुनियांदारीके दरएक बनावमें जींदगीरुप महा युद्धकी छोटी छोटी झपाझपीयें हैं. एक मंदगी आइ, मतलब कि कुदरतने तुमकों पकड लिये बाद तुम कुदरतके स्हामने उपचार किये और तन्दुरस्त हुवे यानि फतेह मिलाइ; दूसरा मनुष्य इलाजमें पीछा पड गया और आखिर मर गया यानि हार गया. एक बडे मनुष्यके साथ मुलाकात हुइ. इस वख्त वो तुमारे साथ खफा हो तुमकों पायमाल करनेका मुकरीर मनसूबा कर लिया–इसका नाम तुमारा पराजय; दूसरे एक मनुष्यने अचानक मुलाकातके वख्त तुमकों हज़ारो रुपैकी निवाजश कर दी–इसका नाम विजय. सुख मिलनेकी खातिर औरसें सादी की और वो! बेदरकार–मूर्ख–बदचलनवाली या रोगीष्ट स्त्री; निकली दूसरे एक मनुष्यकों अचानक सुघड, सुनीतिवंत और आरोग्यवंत स्त्री मिल आइ. इस तरह संसारके हरएक बनाव–मामलेमें फक्त कुदरतके साथ लढनेका है और वो मामुली लढाइमें जय पराजयकी घटमाल फिरती ही रहती हैं.

कुदरतने सृष्टिके लिये 'लढाइ' का निर्माण किया है, तो पीछे लढाइ शब्दसें डरनेवाले–रंज उठाने वाले मनुष्य इस जहान-की हवा खानेकों नालायक ही गिना जावे या कैसा सो विचार लेना मुश्किल नही है.

इस तरह जब कुदरतकी इस सृष्टिमें चारों और लढाइये चल रही हैं, तब जैनीओंको–कुदरतके ये संतानोकों लढाइके नामसें दूर

न भंग जाते हरएक लढाइमें फतेहमंदी मिलानेके वास्ते कटिबद्ध हो-कर रहना चाहियें. ये शक्ति वहार निकालने वाले कौनसे कौनसे पदार्थ है सो विचारना चाहियें.

हाइड्रोजन ग्यासकी जरुरत पडती है तब अपन विचार करते है कि वो ग्यास किसके अंदरसें मिल सकता है ? प्रयोग करतें करतें कितनेक दिनमें—कदाचित् कितनेक वर्षोंमें किसी शोधकको मालुम हुवा कि पानीमेंसें विजलीकी मदद द्वारा हाइड्रोजन ग्यास अलग किया जाता है. और उसी तरह जस्ता वगैरः पदार्थोमेंसें भी ये ग्यास खींचा जा सकता है.

तैसेही अव शोचना चाहिये कि जींदगीमें हर घडी करने पडते युद्धोंकी अंदर विजय देनवाली शक्ति कौनसे पदार्थकी अंदर सें खेंची जा सकै ? सद् भाग्यसें अपने पेस्तरके वर्षोसें भी आगेके वख्तमें कितनेक 'आत्मिक रसायण शास्त्रीअें' हो गये है कि जिन्होंने विविध प्रयोगो करकें ये तत्त्व ढुंढ निकाले हैं; मगर ये एक सामान्य नियम है कि प्रयोगोंकी मुशीवती जानने वालेकोंही प्रयोगके परिणाम जितने कींमतदार मालुम होते है उतने वीन महेनतसे परिणाम याद कर लेने वालेकों न मालुम होवेगा. इस वख्तमें जैन वर्ग कुछ आत्मिक मंथन करकें ये विशाल रसायण शास्त्र संबंधी कुछ भी शोध करनेके लिये प्रयत्न शील नहीं होते है, उससें उन्हीकों अगाडीके वख्तमें शोधन करके गये हुवे महान पुरुषोंकी महेनतका या महेनत के फलका वहुत मान नहीं हैं. ये महान् शोधकने एक पीछे एक तत्वोंकों पकड पकडकर रसायणीक प्रयोग कर—शोध करकें ये तत्त्व ढुंढ लिया है कि उपर कही गइ जीत देनेहारी शक्ति चार पदार्थोमें रही हुइ है और वे पदार्थ दूसरे नहीं; मगर—

-दान-

-शील-

-तप-

-भावना-

ये चार हैं. दान या भावनाकी दूम भी नही जाननेवाले कितनेक उपदेशकों के पास जिन्होंने हमेशाः संकुचित मन के विचार सुन लिये होयेंगे, उन्होंकों ये शोधमें कुछ नवीनता मालुम न होगी; लेकिन वे न माने उससें कुछ वस्तु अवस्तु हो जानेवाली नहीं.

जरा उपरके लेख तर्फ निगाह करनेसें मालुम होगी कि सब के शिरोबिंदुमें 'दान' विराजमान है. श्रद्धा और उमदा खवास ये दो बिगर दानकी हयाती ही असंभवित है. और जहां दान नहीं वहां श्रद्धा और उमदा खवास ही नहीं ऐसा स्पष्ट कहना ही चाहियें. दुनियां के कुछे लोगोंसें साधुमार्गी जैन 'दान' में पीछे पडे हुवे होनेसें मात्र उत्तमोत्तम धर्मको लघुता के पात्र करते हैं. अनूपम सुंदरी कोइ गँवार के हाथमें आ पडे उससे वो बिचारी दुःखी-रंजिदा होवे वैसा ही हुवा है. पांच लाखका आसामी पांच रुपै के बतासे बांटे या पेडे बांटे उतनेमें तो फूल कर फिसीयारी करने लग जाता है. कितनेक जन पांच सात रुपैकी आणपूर्वी छपवा कर प्रभावना करें-बांट देवें उतनेमें तो उसके उपर आपका नाम बडे हरफोंमें छपवाता है! पचास हजारकी मिलकतवाले कितनेक चलनी, थाली, या मुंहपति-कटासणे बांटकर फूल जाते हैं, जानें कि उन्होंने वो न बांटा होता तो कोइ अनाज चालते ही नहीं, खाते ही नहीं या सामायिक भी करते ही नहीं. कितनेक सादी करनेकों जाते हैं वहां दुलहनकी तर्फ के लोगों के कानून मुजब दो रुपे स्थानकखाते देने पडते हैं, तब दो रुपैकी सखावत

छपवानेको भेजे! कितनेक मंदिरमार्गी भाइयों के दबे हुवे और खुशामद के साथ जीवन व्यवहार गुजारनेवाले श्रीमंत स्वधर्मीजन मंदिरमें दोसो पांचसो रुपै गूपचूप दे आवै और स्थानकमें पचास देने पडे तो वडा मान मागने लगे! कितनेक आरंभ समारंभका बहाना निकाल बैठे, कितनेक 'मुझको बहुत खर्च हो गया है.' ऐसा बहाना निकाल बैठे, कितनेक 'मेरी स्थिति नहीं' ऐसा बोल देवें—ऐसे लोग धर्मकी क्या उन्नति कर सकेंगे? सचमुच साधुमार्गी जैन धर्मको शरमिंदा बनानेवाले कोइ होवै तो उन वर्ग के श्रीमंत ही है और वो लज्जास्पद वखीलतामें मददगार कितनेक साधुजीयें हैं. बहुतसे लक्षपति निर्वंश गुजर जाते हैं; मगर किसीने पचीस पचास हजार रुपै साधुशाला—पाठशाला—पुस्तकशाला या हुन्नरशाला खातेमें दे दिये? कितनेक अधम पुरुष तो अपने पास आइ हुइ धर्मादा निमित्तकी रकम आप ही हजम कर जाते हैं. कितनेक उसी रकमकी अंदरसें दो दो चार चार रुपै किसी खातेमें देकर अपना नाम आशकार करते हैं, और कितनेक तो उसी धर्माउ रकमकी अंदरसें बडे कुकर्म के काम करते हैं. और ऐसा होनेपर भी सेंकडों मुनि विचरते है तो भी वे वैसे लोगोंको कुछ नहीं कहते है. मुनियोंको कोइ दाद देवें वैसा भी कहां है? सबब कि ये आप खुद ही अपनी आचार शुद्धि, भावना बल, तपोबल और ज्ञानबलसें ऐसा आताप—रुआब नही पाड सकते हैं. दो दो रुपैकी प्रभावना कराने जितना ही सामर्थ्य उन्मेंसें बहुतसे मुनियोंमें रहा है और उतने के वास्ते भी श्रावकोंको आजीजी करते हैं.

दान गुण विगर 'धर्म' की योग्यताही आइ नही गिनी जाती है. धर्मका अधिकार ही वैसोंको नहीं है. भगवानश्रीने भी

अव्वल दर्जे दानको बिठाया है. और उसके बाद शील, तप और भावना है. ये तीनू गुण दानरूप हलसें खेडे हुवे हृदय क्षेत्रमें बहुत सुगमतासें और अच्छी तरह ऊग सक्ते हैं; लेकिन हृदयकी जमीन पेस्तर दानरूप हलसें खेड देनी चाहियें. दूदा स्वभाव, उमरावपना, कोमल परिणाम ये गुण विगर क्या कभी भावना जैसी कीमतदारमें भी कीमतदार शक्ति आ सके ये क्या मानलेने लायक है ?

उपर कहा गया वैसा जैनोंके लिये लढाइका विशाल क्षेत्र तैयार है और वो वखीलाइ, संकुचित मन, विव्हल चित्त, कायरता और बुरे अध्यवसाय इन्होंको जीत लेनेके वास्ते हमेशां उपयोगमें लेनाही चाहियें.

---

# एक खुली अर्ज.

हमारे प्रिय स्वधर्मी बंधुओंको अर्ज की जाती है कि, हमारे तर्फसे 'जैन समाचार' नामका साप्ताहिक अखवार प्रगट होता है और भी 'गुजराती जैन हितेच्छु' व 'हिंदी जैन हितेच्छु' नामके दो मासिक पत्र प्रगट होते हैं. हमारे स्वधर्मी भाइयोंमें धर्म ज्ञानका और उदारताका शोख कुच्छ कम होनेके सबबसे हमको ग्राहकों कम मिले हैं. इस लिये नुकशानी वहोत आती है, जिससे हिसाब, पत्रव्यवहार, अखवार लिखना, मुसाफरी करना इत्यादि सब कामके लिये हम क्लार्क व नोकर नहीं रख सकते हैं और सब काम अपने हाथसे ही करते हैं. इस लिये हमारी तबीअत बीलकुल खराब हो गइ है. इतना ही नहीं मगर अखवार छापनेके लिये नीजका छापाखाना नहीं होनेसे दुसरेके वहां छपाना पडता है, जिससे भी कुच्छ ज्यादा खर्च लगता है. अब नीजका छापाखाना करना जरुरी है. यदि रु. २००० की साहायता मिल जावे तो छोटासा छापाखाना हम कर लेवे. इस वातकी हम धर्मप्रेमी श्रीमंत स्वधर्मीयोंको शीर्फ सूचना करते हैं. हमने आज तक जाहेर अर्ज कभी नहीं की थी, परंतु अब नुकसानसे बीलकूल थक जानेसे जाहेर अर्ज की जाती है.

जो गृहस्थ अकीला ही इतनी स्हायता करेंगे उन्का नाम छापाखानाके नामकी साथ कायम रखा जायगा.

यदि किसी भाइ नाम नहीं चाहते होंगे और यथा शक्ति मदद करनेकी इच्छा हो तो भी नीम्न लीखीत पत्तेसे पत्रव्यवहार करेः

वाडीलाल मोतीलाल शाह, अधिपति, जैन समाचार.

अहमदावाद ( गुजरात )

---

☛ सर्व जात के पुस्तक ( हस्तलीखीत व छपे हुए ) जैनहितेच्छु ऑफीसमें मिलते हैं.